के. प्रभाकरन

बनाम

पी. जयराजन

11 जनवरी, 2005

[आर. सी. लाहोती, मु.न्या., शिवराज व. पाटिल, के. जी. बालाकृष्णन, बी. एन. श्रीकृष्णा और जी. पी. माथुर, न्यायमूर्तिगण]

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951:

धारा 8(3)- अयोग्यता- निर्धारण- उम्मीदवार की दोषसिद्धि और सजा पर असर डालने वाला बाद का अपीलीय निर्णय- अयोग्यता पर प्रभाव- निर्णितः अयोग्यता का निर्धारण चुनाव की तारीख और नामांकन पत्र की जांच की तारीख के संदर्भ में किया जाना चाहिए न कि किसी चुनाव याचिका में या उसके खिलाफ अपील में निर्णय की तारीख के संदर्भ में- नामांकन या चुनाव की तारीख के बाद की तारीख के अपीलीय निर्णय का प्रभाव पहले किए जा चुके अयोग्यता को पीछे जा कर समाप्त करने का नहीं होगा- धारा 100(1)(ए) और (डी)(आई), 67ए और 36(2)(ए)।

धारा 8(3)- 2 वर्षों के कारावास की अवधि- अयोग्यता के लिए- का निर्धारण- निर्णितः कारावास की अवधि निर्धारित करने के लिए, लगातार (एक के बाद एक) सज़ा के मामले में, सभी अपराधों के लिए सज़ा की कुल अवधि और समवर्ती सज़ा के मामले में, कारावास की कई अवधियों में से सबसे लंबी अवधि को ध्यान में रखा जाना चाहिए- अयोग्यता को आकर्षित करने के लिए, यह आवश्यक नहीं है कि अवधि एक ही अपराध के संबंध में होनी चाहिए- धारा 8 के प्रावधानों का अर्थ दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अनुरूप में समझा जाना चाहिए- दंड प्रक्रिया संहिता, 1973- धारा 31।

धारा 8(4)- अयोग्यता से बचाव- लागू होना- निर्णित: बचाव केवल तब तक उपलब्ध है जब तक सदन जारी रहता है और उम्मीदवार सदन का सदस्य बना रहता है- यह तब लागू नहीं होता है जब सदन भंग हो जाता है या उम्मीदवार सदन का सदस्य नहीं रह जाता है।

भारत का संविधान, 1950:

अनुच्छेद 14- चुनाव में उम्मीदवार- अयोग्यता के उद्देश्य से 'सदन के सदस्य' और 'सदन के गैर-सदस्य' के रूप में वर्गीकरण- इस तरह के वर्गीकरण का औचित्य-निर्णित: ऐसा वर्गीकरण उचित है और उचित अंतर पर आधारित है और इसका सार्वजनिक उद्देश्य के साथ संबंध है- लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951- धारा 8(3) और (4)।

क़ानून की व्याख्या:

कानून के प्रावधान की व्याख्या और वैधानिक प्रावधान की विवेचना पर निर्णय- निर्णित: व्याख्या और निर्णय करते समय यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि यह दृष्टिकोण असंख्य स्थितियों पर लागू होगा- व्याख्या जिस के परिणामस्वरूप भ्रम, विसंगति, अनिश्चितता और व्यावहारिक कठिनाइयां हों, उस से बचना होगा।

कानूनी कल्पना- अर्थ और उपयोग- निर्णित: कानूनी कल्पना अस्तित्वहीन तथ्यों की कल्पना कर उन तथ्यों की स्थिति से उत्पन्न होने वाले परिणामों का अनुमान लगाती है- चूंकि यह केवल किसी निश्चित उद्देश्य के लिए बनाया गया है, इसलिए इसे उस उद्देश्य तक सीमित किया जाना चाहिए- इसे उस वैध क्षेत्र से परे फैलाना कानूनी कल्पना के उद्देश्य का अवैध विस्तार होगा।

शब्द और वाक्यांश:

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 8 (3) के संदर्भ में "कोई भी अपराध"

इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए जो प्रश्न उठे थे वे थेः

(1) क्या चुनाव की तारीख के बाद की तारीख का ऐसा अपीलीय निर्णय जिस का किसी उम्मीदवार की दोषसिद्धि और उस पर पारित कारावास की सजा पर असर पड़ता है, का प्रभाव ऐसे उम्मीदवार की अयोग्यता को पीछे जा कर समाप्त करने का होगा जिस उम्मीद्वार को किसी भी अपराध के लिए दोषी ठहराए जाने और कम से कम 2 साल के कारावास की सजा पाने की वजह से नामांकन और चुनाव की तारीखों पर नामांकन दाखिल करने और चुनाव लड़ने के लिए अयोग्य घोषित कर दिया गया था?

(2) लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 की उप-धारा (3) में नियोजित अभिव्यक्ति- "कोई व्यक्ति जो किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया गया है और दो वर्ष से अन्यून के कारावास से दंडादिष्ट किया गया है" का क्या अर्थ है? क्या यह आवश्यक है कि अयोग्यता को आकर्षित करने के लिए एक ही अपराध के संबंध में कम से कम 2 साल के कारावास की अवधि होनी चाहिए?

(3) अधिनियम की धारा 8 की उप-धारा (4) का क्या तात्पर्य है; क्या सदन के किसी सदस्य को उप-धारा (4) द्वारा अयोग्यता के खिलाफ प्रदान किया गया संरक्षण तब भी लागू रहेगा, जब चुनाव या नामांकन की तारीख को उम्मीदवार के संसद या किसी राज्य की विधान सभा की सदस्यता ख़त्म हो चुकी थी?

अपील को स्वीकृत करते हुए, न्यायालय ने

निर्णितः *द्वारा लाहोती, मु.न्या. (अपने लिए और पाटिल, श्रीकृष्णा और माथुर, न्यायमूर्तिगण के लिए):*

1.1. लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 100(1)(ए) के तहत निर्वाचित उम्मीद्वार की योग्यता या अयोग्यता का प्रश्न उम्मीदवार को उसके चुनाव की तारीख के संदर्भ

में निर्धारित किया जाना है, जो तारीख, अधिनियम की धारा 67ए में परिभाषित की गई है, वह तारीख होगी जिस पर उम्मीदवार को निर्वाचन अधिकारी द्वारा निर्वाचित घोषित किया जाता है। क्या नामांकन अनुचित रूप से स्वीकार किया गया था, इसका निर्धारण धारा 100(1)(डी)(आई) के उद्देश्य के लिए नामांकन की जांच के लिए निर्धारित तिथि के संदर्भ में किया जाना चाहिए जिस कि अभिव्यक्ति अधिनियम की धारा 36(2)(ए) में की गई है। ऐसी तिथियाँ यह निर्धारित करने के उद्देश्य से केंद्र बिंदु हैं कि क्या उम्मीदवार योग्य नहीं है या सदन में सीट पाने के लिए चुने जाने के लिए अयोग्य है। इन केंद्र बिंदु तिथियों के संदर्भ में ही धारा 8 की उप-धाराओं (1), (2) और (3) के तहत अयोग्यता का प्रश्न निर्धारित करना होगा। दोषसिद्धि के खिलाफ अपील के लंबित होने का तथ्य अप्रासंगिक और महत्वहीन है। इसलिए अपील या पुनरीक्षण में दोषसिद्धि या सजा को दरकिनार करने या सजा को कम करने के बाद के निर्णय का उस अयोग्यता को समाप्त करने का प्रभाव नहीं होगा जो केंद्र बिंदु तिथियों पर मौजूद थी। निर्णय की तारीखें चुनाव की तारीख और नामांकन के जांच की तारीख होती हैं न कि चुनाव याचिका या उसके खिलाफ अपील में निर्णय की तारीख। (328-जी; 329-बी)

अमृत लाल अंबालाल पटेल बनाम हिमथभाई गोमनभाई पटेल एवं अन्य, ए. आई. आर. (1968) एस. सी. 1455 पर निर्भर किया गया।

1.2. नामांकन या चुनाव (जैसा भी मामला हो) की तारीख के बाद की तारीख का एक अपीलीय निर्णय और इस निर्णय से उम्मीदवार की दोषसिद्धि या उस पर पारित कारावास की सज़ा पर असर पड़ने से अयोग्यता को पिछली तारीख से समाप्त करने का प्रभाव नहीं पड़ेगा यदि कोई व्यक्ति किसी अपराध के लिए दोषी ठहराए जाने के परिणामस्वरूप कम से कम दो साल के कारावास की सज़ा पाने के परिणामस्वरूप नामांकन दाखिल करने या चुनाव लड़ने की तारीख़ (जैसा भी मामला हो) को नामांकन दाखिल करने या चुनाव लड़ने के लिए वास्तव में अयोग्य था। [321-जी-एच]

श्री मणिलाल बनाम श्री परमई लाल एवं अन्य, **[1970] 2 एस.सी.सी. 462 और** *विद्या चरण शुक्ला बनाम पुरुषोत्तम लाल कौशिक,* **[1981] 2 एस.सी.सी. 84**, रद्द किया।

दलीप कुमार शर्मा बनाम एम. पी. राज्य, **[1976] 1 एस.सी.सी. 560**, भिन्न पाया।

1.3. धारा 8(3) के प्रयोजन के लिए जो प्रासंगिक है वह कारावास की वास्तविक अवधि है जिस से किसी भी दोषी व्यक्ति को न्यायालय द्वारा घोषित कारावास की सज़ा के परिणामस्वरूप गुज़रना होगा या जिसे गुज़ारा जा चुका है और जिसे नामांकन की जांच की तारीख या चुनाव की तारीख के संदर्भ में देखा जाना चाहिए। अन्य सभी कारक अप्रासंगिक हैं। हो सकता है कि किसी दोषी व्यक्ति ने अपील दायर की हो। हो सकता है कि उस ने सज़ा के निष्पादन को निलंबित करने या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 389 के तहत आदेश भी प्राप्त कर लिया हो। लेकिन फिर इसका कोई असर नहीं होगा। अपीलीय न्यायालय को धारा 389 के तहत यह आदेश देने का अधिकार है कि किसी दोषी व्यक्ति द्वारा अपील लंबित रहने तक सज़ा या आदेश के निष्पादन को निलंबित किया जाए और यह भी कि यदि वह कारावास में है, तो उसे ज़मानत या मुचलके पर रिहा किया जाए। जिसे निलंबित किया जाता है वह दोषसिद्धि या सजा नहीं है; यह केवल सज़ा या आदेश का निष्पादन है जिसे निलंबित किया जाता है। यह निलंबित किया गया है और इसे मिटाया नहीं गया है। [320-डी-एफ]

शरत चंद्र राभा एवं अन्य बनाम खगेन्द्रनाथ नाथ एवं अन्य, **[1961] 2 एस.सी.आर. 133, अनुसरणित।**

1.4. चुनाव याचिका की कार्यवाही कार्यपालिका द्वारा आयोजित चुनाव कार्यवाही से स्वतंत्र होती है। चुनाव याचिका में कार्यवाही को किसी भी तरह से चुनावी कार्यवाही का जारी रखना कहा या माना नहीं जा सकता है। चुनाव याचिका पर सुनवाई करने वाला उच्च न्यायालय निर्वाचन अधिकारी के फैसले या उम्मीदवार के परिणाम की घोषणा के खिलाफ अपील पर सुनवाई नहीं कर रहा है। [316-सी]

1.5. निस्संदेह, उच्च न्यायालय चुनाव याचिका में निर्णय की तारीख पर एक राय बना रहा है, लेकिन उस राय का गठन जांच की तारीख के संदर्भ में किया जाना चाहिए, न कि ऐसे तथ्यों के आधार पर जो काल्पनिक रूप से किसी बाद की घटना द्वारा निर्धारित पिछली तारीख पर मौजूद माने जा सकते हैं, बल्कि उन तथ्यों के आधार पर किया जाना चहिए जो वास्तव में तब मौजूद थे, ताकि यह पता लगाया जा सके कि क्या निर्वाचन अधिकारी उस तारीख यानी जांच की तारीख को नामांकन की जांच पर अपने निर्णय में सही या गलत था। इस तरह के निर्णय की शुद्धता, आदि को किसी भी घटना द्वारा निर्धारित करने के लिए नहीं छोड़ा जा सकता है जो उच्च न्यायालय द्वारा जांच की तारीख और निर्णय की घोषणा की तारीख के बीच हुई हो। [316-ई-एफ]

1.6. कानून के किसी प्रावधान की व्याख्या और उस का मतलब निकालते हुए उस मतलब पर निर्णय करते समय न्यायालय को यह ध्यान रखना होगा कि न्यायालय द्वारा लिया गया यह दृष्टिकोण उन असंख्य स्थितियों पर लागू होगा जिन के उत्पन्न होने की संभावना है। इस तरह की व्याख्या से बचना होगा क्योंकि इस के परिणामस्वरूप किसी भी प्रणाली के काम करने में भ्रम, विसंगति, अनिश्चितता और व्यावहारिक कठिनाइयाँ पैदा होंगी। [316-जी; 317-ए]

1.7. एक आपराधिक मामले में एक अपीलीय निर्णय, जो अभियुक्त-अपीलार्थी को दोषमुक्त करता है, निचली अदालत द्वारा दर्ज की गई दोषसिद्धि और उस पर दी गई सजा को मिटाने का प्रभाव रखता है- यह एक कानूनी कल्पना (फिक्शन) है। कानूनी कल्पना पर जोर देते समय यह नहीं भूलना चाहिए कि कानूनी कल्पनाएँ केवल किसी निश्चित उद्देश्य के लिए बनाई जाती हैं और कल्पना उस उद्देश्य तक सीमित होनी चाहिए जिसके लिए इसे बनाया गया था और इसे उस वैध क्षेत्र से परे नहीं बढ़ाया जाना चाहिए। एक कानूनी कल्पना उन तथ्यों की स्थिति के अस्तित्व का अनुमान लगाती है जो सम्भवत: मौजूद नहीं हैं और फिर

उन परिणामों का पता लगाती है जो तथ्यों की उस स्थिति से निकलते हैं। इस तरह के परिणामों को केवल अपनी तार्किक सीमा तक उस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए तैयार किया जाना चाहिए जिसके लिए कानूनी कल्पना बनाई गई है। तार्किक रूप से जो प्रवाहित होता है उससे परे परिणामों को फैलाना कानूनी कल्पना के उद्देश्य का अवैध विस्तार के बराबर है। काल्पनिक रूप से एक निर्दोष करार देने वाले अपीलीय आदेश होने से निचली अदालत की दोषसिद्धि समाप्त हो जाती है, फिर भी, इस तरह की कानूनी कल्पना के बल पर यह माना लेना कि एक उम्मीदवार को हालांकि दोषी ठहराया गया था और दो साल या उस से अधिक के कारावास की सजा सुनाई गई थी, पर वह बाद की तारीख में बरी होने के परिणामस्वरूप जांच या नामांकन की तारीख पर अयोग्य नहीं था, इस कानूनी कल्पना के उद्देश्य का एक अवैध विस्तार होगा।

[319- ए-सी, जी-एच]

2.1. अयोग्यता की प्रयोज्यता को आकर्षित करने के उद्देश्य से अधिनियम की धारा 8 (3) में व्यक्त "किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया गया है और दो वर्ष से अन्यून के कारावास से दंडित किया गया है" के अर्थ में जो देखी जानी चाहिए वह कुल समय है जिस के लिए किसी व्यक्ति को दोषसिद्धि और मुकदमे में सुनाई गई सज़ा के परिणामस्वरूप जेल में रहने का आदेश दिया गया है। 'अपराध' शब्द के पहले 'किसी' शब्द को अपराध की प्रकृति के रूप में समझा जाना चाहिए न कि अपराध/अपराधों की संख्या के रूप में। संज्ञा 'अपराध' को अर्हता प्रदान करने वाले 'किसी' विशेषण का उपयोग इस निवेदन को पुख़्ता करने के लिए नहीं किया जा सकता है कि कम से कम दो वर्ष के लिए कारावास की सजा एक ही अपराध के संबंध में होनी चाहिए। [329- सी-डी; 325-सी]

2.2. संदर्भ और परिस्थितियों के अनुसार 'किसी' शब्द के कई अर्थ हो सकते हैं। इसका अर्थ हो सकता है 'सभी', 'हर एक'; 'प्रत्येक'; ‘कुछ'; या 'एक' ‘या कई में से कई'। 'किसी'

शब्द का उपयोग 'कुछ', 'कई में से', 'एक अनंत संख्या' जैसी मात्राओं को इंगित करने के लिए किया जा सकता है। इसका उपयोग संज्ञा की गुणवत्ता या प्रकृति को इंगित करने के लिए भी किया जा सकता है जो यह है जैसे कि 'सभी' या 'प्रत्येक'। [324- सी-एच]

श्री बालगणेशन मेटल्स बनाम एम. एन. शण्मुगम चेट्टी एवं अन्य, **[1987] 2 एस.सी.सी. 707, पर निर्भर किया गया।**

ब्लैक की विधिक शब्दकोष (छठा संस्करण) पृष्ठ सं 94 ; लॉ लेक्सिकौन, पी. रामनाथ अय्यर, दूसरा संस्करण, पृष्ठ सं 116; न्यायमूर्ति जी.पी सिंह का विधिक व्याख्या के सिद्धांत, 9 वां संस्करण, 2004 पृष्ठ सं 302, **संदर्भित किया गया।**

2.3. अधिनियम की धारा 8 (3) के तहत अयोग्यता को लागू करने का उद्देश्य राजनीति के अपराधीकरण को रोकने के लिए है। धारा 8 चुनावों में स्वतंत्रता और निष्पक्षता को बढ़ावा देने के साथ-साथ निर्वाचन प्रक्रिया के दौरान कानून और व्यवस्था बनाए रखने को बढ़ावा देने के लिए है। इस प्रावधान की व्याख्या इतनी सार्थक होनी चाहिए कि उस दुराचार को असरदार तरीके से प्रतिबंधित किया जा सके जिस दुराचार को प्रतिबंधित करना इस प्रावधान का उद्देश्य है। यह शब्द किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ....व्यक्ति' को 'उन सभी अपराधों जिन के लिए किसी व्यक्ति पर आरोप लगाया गया है और उसे एक मुकदमे में दोषी ठहराया गया है' के रूप में माना जाना चाहिए। "दो वर्ष से अन्यून के कारावास से दंडित किया गया है" शब्दों की प्रयोज्यता 2 वर्ष से अधिक का निर्णय कुल अवधि की गणना करके किया जाएगा।

[325- एफ-एच; 326-ए-बी]

2.4. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 31 के तहत आपराधिक अदालत के पास अभियुक्त द्वारा किए गए अपराधों के लिए अभियुक्त को दोषी ठहराने के बाद दंड पारित करने का अधिकार है। कारावास की भिन्न्न अवधियों को अभियुक्त द्वारा उस क्रम में एक के बाद काटा

जाएगा जैसा न्यायालय निर्देशित करे, तब जब न्यायालय ये निर्देश न दे कि सारी अवधियां एक साथ काटी जाएंगी। कारावास की प्रत्येक अवधि जिस के लिए अभियुक्त को अपराधों के लिए सज़ा सुनाई गई है, न्यायालय के क्षेत्राधिकार में है और सिर्फ़ इस वजह से न्यायालय द्वारा पारित अवधि को अवैध या न्यायालय की शक्ति के परे नहीं माना जा सकता कि लगातार सज़ा के मामले में कारावास की कुल अवधि उस न्यायालय की अधिक से अधिक सज़ा देने की योग्यता से अधिक है। दोषी ठहराए गए व्यक्ति द्वारा अपील हेतु उस के खिलाफ पारित लगातार सज़ाओं के योग को एकल सज़ा माना जाएगा। इसी सिद्धांत को सही माना जा सकता है और अयोग्यता निर्धारित करने के लिए लागू किया जा सकता है। अधिनियम की धारा 8 (3) के तहत अयोग्यता की अवधि इस तरह की दोषसिद्धि की तारीख से शुरू होती है। अयोग्यता कारावास से उनकी रिहाई की तारीख से गणना की गई छह साल की और अवधि के लिए जारी रहती है। इस प्रकार, उस व्यक्ति को कारावास की सजा भुगतने के लिए हिरासत में लिया गया या नहीं, दोनों मामलों में अयोग्यता दोषसिद्धि की तारीख से शुरू होती है। वह अयोग्यता के प्रभाव से केवल इसलिए नहीं बच सकता क्यों कि उसे ज़मानत पर होने कि वजह से हिरासत में नहीं लिया गया या वह फरार था। कारावास की वास्तविक अवधि प्रासंगिक है। [323-ए-एफ]

2.5. अधिनियम की धारा 8 के प्रावधानों का अर्थ दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अनुरूप और इस तरह से लगाया जाना चाहिए जिस से दोनों विधानों में निहित प्रावधानों को प्रभावी बनाया जा सके। लगातार चलने वाली दी गई कारावास की सज़ाओं के मामले में सज़ा की कुल अवधि और समवर्ती रूप से चलने के लिए किए गए कारावास की सज़ा में सबसे लंबी अवधि यह तय करने के लिए प्रासंगिक होगी कि कारावास की सजा 2 साल से कम है या नहीं। [323-एफ-जी]

2.6. यह नहीं कहा जा सकता है कि अधिनियम की धारा 8 एक दंडात्मक प्रावधान है और इसलिए इसका सख्ती से अर्थ लगाया जाना चाहिए। चुनाव लड़ना एक वैधानिक अधिकार है और पद पर रहने की योग्यताओं और अयोग्यताओं को वैधानिक रूप से निर्धारित किया जा सकता है। अयोग्यता के प्रावधान को दंडात्मक प्रावधान नहीं कहा जा सकता है और निश्चित रूप से इसे आपराधिक कानून में निहित दंडात्मक प्रावधान के बराबर नहीं माना जा सकता है। [326- बी-सी]

ललिता जालान एवं अन्य बनाम बॉम्बे गैस कंपनी लिमिटेड एवं अन्य, [2003] 6 एस.सी.सी. 107, पर निर्भर किया गया।

3.1. अधिनियम की धारा 8 की उप-धारा (4) एक अपवाद है जिसे उप-धारा (1), (2) और (3) से अलग किया गया है। अयोग्यता से बचे रहने की पूर्व शर्त उस व्यक्ति द्वारा रखी जाती है जिसे दोषी ठहराए जाने की तारीख पर सदन का सदस्य होते हुए दोषी ठहराया जाता है। इस तरह के अपवाद को बनाने का उद्देश्य किसी व्यक्ति को लाभ प्रदान करना नहीं है; इसका उद्देश्य सदन की रक्षा करना है। इस तरह के बचाव का लाभ केवल तब तक उपलब्ध है जब तक सदन का अस्तित्व बना रहता है और व्यक्ति सदन का सदस्य बना रहता है। यदि सदन भंग हो जाता है या व्यक्ति सदन का सदस्य नहीं रह जाता है तो यह बचाव लागू नहीं होता है। [328- ई]

शिबू सोरेन बनाम दयानंद सहाय एवं अन्य, [2001] 7 एस.सी.सी. 425, पर निर्भर किया गया।

3.2. अधिनियम की धारा 8 की उप-धारा (3) और उप-धारा (4) के तुलनात्मक अध्ययन से पता चलता है कि संसद ने अयोग्यता लागू करने के उद्देश्य से चुनाव में उम्मीदवारों को दो वर्गों में वर्गीकृत करने का विकल्प चुना है। अर्थात: (1) एक व्यक्ति जो दोषसिद्धि की तारीख को किसी राज्य की संसद या विधानमंडल का सदस्य है, और (ii) एक

व्यक्ति जो ऐसा सदस्य नहीं है। इन दोनों वर्गों में आने वाले व्यक्ति अच्छी तरह से परिभाषित और निर्धारित वर्ग हैं और इसलिए, दो निश्चित वर्ग बनाते हैं। इस तरह के वर्गीकरण को अनुचित नहीं कहा जा सकता है क्योंकि यह एक अच्छी तरह से निर्धारित अंतर पर आधारित है और इस का हासिल होना एक सार्वजनिक उद्देश्य के साथ संबंध है। [326-एच; 327-ए-बी]

द्वारा बालकृष्णन, जेः(आंशिक रूप से असहमत):

1. अधिनियम की धारा 8(3) के पहले भाग में उपयोग किए गए शब्दों से, अर्थात् "एक व्यक्ति जिसे किसी अपराध के लिए दोषी ठहराया गया है" से यह स्पष्ट है कि अयोग्यता आकर्षित करने के लिए, व्यक्ति को किसी भी अपराध के लिए दोषी ठहराया गया होना चाहिए और कम से कम दो साल के कारावास की सज़ा सुनाई गई होनी चाहिए। छह अपराधों में से, जिनके लिए प्रत्यर्थी को दोषी पाया गया था, यदि उन सभी को अलग-अलग एकल अपराध के रूप में लिया जाता है, तो प्रत्यर्थी किसी भी अपराध के लिए दोषी व्यक्ति नहीं है, जिसके लिए उसे दो साल से अधिक की सज़ा दी गई है। यह अपराध की गंभीरता है जो मायने रखती है न कि विभिन्न छोटे अपराधों के लिए दोषसिद्धि या विभिन्न छोटे अपराधों में दी गई सज़ाओं की कुल अवधि जो दो साल या उस से अधिक हो। अधिनियम की धारा 8 (3) में उपयोग किए गए “किसी भी अपराध” को "कई अपराधों में से एक" के रूप में लिया जाना चाहिए। [331-ई]

2. केवल इस लिए कि मजिस्ट्रेट ने आदेश दिया कि सज़ा लगातार चलती रहेगी, और कुल अवधि दो साल या उससे अधिक है, दोषी ठहराए गए व्यक्ति को अधिनियम की धारा 8 (3) के तहत अयोग्य नहीं माना जाएगा। सज़ा के समवर्ती रूप से या लगातार चलने का निर्देश बस सज़ा के निष्पादन किए जाने का निर्देश है। इस से सज़ा की प्रकृति प्रभावित नहीं होगी। अधिनियम की धारा 8(3) के तहत अयोग्यता सज़ा के निष्पादन के तरीके पर पूरी तरह से

निर्भर नहीं होगी, विशेष रूप से जब इस संबंध में कोई वैधानिक या न्यायिक दिशानिर्देश नहीं हैं।

[332-बी-डी]

3. धारा 8(3) के शब्दों की व्याख्या सख्ती से की जानी चाहिए और किसी व्यक्ति के ख़िलाफ़ इस धारा के अंतर्गत अयोग्यता का उपयोग तभी किया जा सकता है जब वह व्यक्ति स्पष्ट रूप से इस धारा में उपयोग किए गए शब्दों के सामान्य अर्थ के चार कोनों के भीतर आता हो। यदि उसे किसी अपराध के लिए दोषी ठहरा कर दो या उस से अधिक वर्षों के लिए सज़ा नहीं दी गई है, तो वह चुनाव लड़ने के लिए अयोग्य होने के लिए ज़िम्मेदार नहीं है। बेशक, राजनीति का अपराधीकरण एक गंभीर समस्या बन गई है जिस से निपटा जाना चाहिए और कोई भी इस बात पर विवाद नहीं करेगा कि यह हमारे लोकतांत्रिक संस्थानों की नींव को प्रभावित करता है, लेकिन यह अपने आप में शब्दों के अर्थ को विस्तृत तरीके से निकालने के लिए पर्याप्त नहीं है ताकि उन व्यक्तियों को इसके दायरे में शामिल कर लिया जाए जो सख्ती से इसके दायरे में नहीं आ रहे हैं, विशेष रूप से तब जब अयोग्यता केवल चुनाव लड़ने में नहीं है बल्कि रिहाई के बाद के छह सालों तक भी अयोग्यता रहे। [332-ई-एच]

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार निर्णयः सिविल अपील सं. 8213 वर्ष 2001।

ई. पी. सं. 1 वर्ष 2001 में केरल उच्च न्यायालय के निर्णय एवं आदेश दिनांक 5.10.2001 से।

के साथ

सी. ए. सं. 6691 वर्ष 2002

एल. नागेश्वर राव, के. के. वेणुगोपाल, रॉय अब्राहम, सुश्री सीमा जैन, हिमिंदर लाल, अजय वर्मा, निखिल मजीठिया, सुधांशु श्रीवास्तव, सी. ए. सं. 6691/2002 में अपीलकर्ता स्वयं और एम. सी. ढींगरा, जी. प्रकाश और सुश्री ई. बीना प्रकाश, रणबीर सिंह कुंडू और संजय शहरावत उपस्थित दलों के लिए।

न्यायालय का निम्नलिखित निर्णय/आदेश

आर. सी. लाहोती, सीजेआई द्वारा (स्वयं के लिए और एफ. शिवराज वी. पाटिल, बी. एन. श्रीकृष्णा और जी. पी. माथुर जे.जे. के लिए) दिया गया।

सी. ए. सं. 8213/2001 में तथ्य

संख्या 14 कुथुपरम्बा विधानसभा क्षेत्र के लिए चुनाव अप्रैल-मई, 2001 के महीनों में आयोजित किया गया था। तीन उम्मीदवार थे, जिन में अपीलार्थी के. प्रभाकरण और प्रतिवादी पी. जयराजन चुनाव लड़ रहे थे। 24.4.2001 को नामांकन दाखिल किए गए थे। मतदान 10.5.2001 को आयोजित किया गया था। चुनाव का परिणाम 13.5.2001 को घोषित किया गया था। प्रत्यर्थी को निर्वाचित घोषित किया गया था।

दिनांक 9.12.1991 की एक घटना के संबंध में, प्रतिवादी कई अपराधों के आरोप में मुकदमे का सामना कर रहा था। 9.4.1997 को न्यायिक दंडाधिकारी प्रथम श्रेणी, कुथुपरम्बा ने प्रतिवादी को अपराधों का दोषी ठहराया और उन्हें निम्नानुसार कारावास की सजा सुनाई गईः-

अपराध	सज़ा
भा.दं.सं की धारा 143 के साथ धारा 149	एक महीने का कठोर कारावास
भा.दं.सं की धारा 148 के साथ धारा 149	छः महीनों का कठोर कारावास
भा.दं.सं की धारा 447 के साथ धारा	एक महीने का कठोर कारावास

149	
भा.दं.सं की धारा 353 के साथ धारा 149	छः महीनों का कठोर कारावास
भा.दं.सं की धारा 427 के साथ धारा 149	तीन महीनों का कठोर कारावास
लोक संपत्ति नुकसान निवारण अधिनियम की धारा 3(2)(ई) के साथ भा.दं.सं की धारा 149	एक साल का कठोर कारावास

सज़ाओं को लगातार चलाने का निर्देश दिया गया था (और समवर्ती नहीं)। इस प्रकार प्रत्यर्थी को कुल दो वर्षों और 5 महीनों की अवधि के लिए कारावास की सज़ा सुनाई गई। 24.4.1997 को प्रतिवादी ने सत्र न्यायालय, थालास्सेरी के समक्ष आपराधिक अपील सं. 118/1997 दायर की। दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (इसके बाद संक्षेप में 'संहिता') की धारा 389 द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए सत्र न्यायालय ने सुनवाई के दौरान कारावास की सज़ा के निष्पादन को निलंबित करने और प्रतिवादी को ज़मानत पर रिहा करने का निर्देश दिया।

प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल नामांकन पत्र पर अपीलार्थी द्वारा इस आधार पर आपत्ति जताई गई थी कि प्रत्यर्थी को दोषी ठहराया गया था और 2 साल से अधिक की अवधि के लिए कारावास की सजा सुनाई गई थी, जिस वजह से प्रत्यर्थी चुनाव लड़ने के लिए अयोग्य हो चुके हैं। हालाँकि, आपत्ति को निर्वाचन अधिकारी द्वारा खारिज कर दिया गया और प्रत्यर्थी का नामांकन स्वीकार कर लिया गया। निर्वाचन अधिकारी ने यह राय बनाई कि प्रत्यर्थी को कई अपराधों के लिए दोषी ठहराया गया था और कारावास की कोई भी अवधि जिसके लिए उसे सजा सुनाई गई

थी, 2 साल की नहीं थी, और इसलिए, लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (इसके बाद संक्षेप में 'आर. पी. ए.') की धारा 8 (3) के अर्थ के भीतर अयोग्यता आकर्षित नहीं हुई।

15.6.2001 को अपीलार्थी ने आर.पी.ए. के अध्याय II के तहत एक चुनाव याचिका दायर की मुख्य रूप से इस आधार पर कि प्रत्यर्थी अयोग्य हो चुके हैं, और इसलिए न तो उनका नामांकन वैध था और न ही उन्हें निर्वाचित घोषित किया जा सकता है।

25.7.2001 को सत्र न्यायालय ने प्रत्यर्थी द्वारा दायर अपील को आंशिक रूप से स्वीकार किया। अभियुक्त की दोषसिद्धि और उस पर पारित सज़ा को इस संशोधन के साथ बनाए रखा गया कि कई अपराधों के लिए कारावास की मूल सजा जिस के लिए प्रतिवादी को दोषी पाया गया था, को समवर्ती रूप से चलाया जाएगा।

5.10.2001 को उच्च न्यायालय के एक विद्वान नामित चुनाव न्यायाधीश ने चुनाव याचिका को खारिज करने का निर्देश देते हुए निर्णय लिया। विद्वत न्यायाधीश ने निर्वाचन अधिकारी द्वारा लिए गए इस विचार में कोई त्रुटि नहीं पाई कि आर.पी.ए. की धारा 8(3) आकर्षित नहीं हुई थी। विद्वान न्यायाधीश ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि चुनाव याचिका के लंबित रहने के दौरान, निचली अदालत द्वारा पारित सज़ा को अपीलीय अदालत द्वारा संशोधित किया गया था, जिसने दोषसिद्धि और कारावास की विभिन्न शर्तों को बनाए रखते हुए, जिस में प्रतिवादी को सजा सुनाई गई थी, सजा को समवर्ती रूप से चलाने का निर्देश दिया था। उच्च न्यायालय की राय में, अपीलीय न्यायालय द्वारा संशोधित सजा, निचली अदालत के फैसले की तारीख से पूर्वव्यापी रूप से संचालित होगी, और इसलिए भी किसी भी मामले में अयोग्यता का अस्तित्व समाप्त हो गया था। उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय के दो फैसलों *श्री मन्नी लाल बनाम श्री ई. परमई लाल एवं अन्य,* [1970] 2 एस.सी.सी. 462 और *विद्या चरण शुक्ला बनाम पुरुषोत्तम लाल कौशिक,* [1981] 2 एस.सी.सी. 84 पर निर्भर किया।

सी. ए. 6691/2002 में तथ्य

18.9.1993 को प्रत्यर्थी सं. 1, नफे सिंह के खिलाफ धारा 148, 307, 323 325, 326/149 भारतीय दंड संहिता और शस्त्र अधिनियम 1959 की धारा 25 और 27 के तहत अपराधों के लिए प्राथमिकी सं. 386 दर्ज की गई थी। घटना में घायल व्यक्तियों में से एक की एफ.आई.आर. के पंजीकरण के बाद मृत्यु हो गई और अपराध को भा.दं.सं की धारा 302 के तहत हत्या के अपराध में बदल दिया गया और अन्य आरोपीत व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया गया। बाद में नफे सिंह को ज़मानत पर रिहा कर दिया गया। 10.5.1996 को जब नफ़े सिंह और अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ लगाए गई आरोपों पर मुक़दमा चल रहा था, तब हरियाणा राज्य में चुनाव हुए। नफ़े सिंह ने चुनाव लड़ा और 10.05.1996 उन्हें बहादुरगढ़ निर्वाचन क्षेत्र से विधान सभा के सदस्य के रूप में निर्वाचित घोषित किया गया।

17.05.1999 को अभियुक्त और अन्य लोगों पर मुकदमा चलाने वाली सत्र अदालत ने नाफे सिंह को आई.पी.सी. की धारा 302 और अन्य अपराधों का दोषी ठहराया। 19.5.1999 को उन्हें आजीवन कारावास की सज़ा सुनाई गई थी। 25.5.1999 को उन्होंने अपनी दोषसिद्धि के खिलाफ उच्च न्यायालय में अपील दायर की। 8.10.1999 को उच्च न्यायालय ने नफ़े सिंह के खिलाफ पारित कारावास की सज़ा के निष्पादन को निलंबित करने का निर्देश दिया और उन्हें ज़मानत पर रिहा करने का भी निर्देश दिया। नफ़े सिंह ने ज़मानत बांड प्रस्तुत किए और ज़मानत पर रिहा हो गए। उस समय तक वह चार महीने और 21 दिनों के कारावास से गुज़र चुके थे।

14.12.1999 को हरियाणा राज्य के राज्यपाल ने मध्यावधि चुनाव के लिए हरियाणा विधानसभा को भंग कर दिया। जनवरी 2000 के पहले सप्ताह में निर्वाचन आयोग ने चुनाव कार्यक्रम को अधिसूचित किया। 37-बहादुरगढ़ विधानसभा क्षेत्र के लिए नामांकन दाखिल करने की अंतिम तिथि 3.2.2000 निर्धारित की गई थी। 29.1.2000 को इंडियन नेशनल लोक दल,

जिस से नाफे सिंह संबंधित थे, ने अपने आधिकारिक उम्मीदवारों की पहली सूची जारी की, जिस में नफे सिंह, प्रत्यर्थी सं 1 की पत्नी श्रीमती शीला देवी के नाम को शामिल किया गया था। 1.2.2000 को श्रीमती शीला देवी ने इंडियन नेशनल लोकदल के टिकट पर अपना नामांकन पत्र दाखिल किया। 2.2.2000 को नफे सिंह ने भी कृत्रिम उम्मीदवार या अपनी पत्नी श्रीमती के विकल्प के रूप में अपना नामांकन पत्र दाखिल किया। शीला। नामांकन पत्रों की जांच की तारीख पर अपीलार्थी ने नफे सिंह के नामांकन पर आपत्ति जताते हुए कहा कि आई.पी.सी. की धारा 302 के तहत पारित आजीवन कारावास की सज़ा और दोषसिद्धि को देखते हुए नफे सिंह संविधान के अनुच्छेद 191 के साथ आर.पी.ए. की धारा 8(3) के तहत हरियाणा विधानसभा के सदस्य के रूप में चुने जाने के लिए अयोग्य हैं। आपत्ति को निर्वाचन अधिकारी द्वारा खारिज कर दिया गया जिन्होंने नफ़े सिंह द्वारा दाखिल नामांकन पत्र को वैध स्वीकार किया। हालांकि, नफे सिंह की पत्नी श्रीमती शीला के नामांकन पत्र को ठीक नहीं पाया गया और इस लिए उसे अस्वीकार कर दिया गया। इसके बाद इंडियन नेशनल लोकदल ने बहादुरगढ़ विधानसभा क्षेत्र से नफे सिंह को अपना उम्मीदवार घोषित किया। मतदान 22.2.2000 को हुआ था। परिणाम 25.2.2000 को घोषित किए गए थे जिसमें नफे सिंह ने अपीलार्थी, अपने निकटतम प्रतिद्वंद्वी, को 1,648 मतों के अंतर से मात दी और निर्वाचित घोषित किए गए। चुनाव मैदान में कुल ग्यारह उम्मीदवार थे।

8.4.2000 को अपीलार्थी ने आर.पी.ए. के अध्याय II के तहत एक चुनाव याचिका दायर की। चुनाव याचिका में लिए गए आधारों में से एक निर्वाचन अधिकारी द्वारा नफे सिंह के नामांकन पत्र की अनुचित स्वीकृति थी। नफे सिंह ने चुनाव याचिका का विरोध किया। पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के नामित चुनाव न्यायाधीश ने पक्षों की दलीलों से उत्पन्न होने वाले 13 मुद्दों को तैयार किया। 1 से 7 तक के मुद्दों की सुनवाई प्रारंभिक मुद्दों के रूप में की गई जिस में किसी सबूत की आवश्यकता नहीं थी।

इस से पहले कि हम उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित चुनाव याचिका के परिणाम पर ध्यान दें, कुछ और तिथियों पर ध्यान देने की आवश्यकता है, क्योंकि वे प्रासंगिक हैं। प्रारंभिक मुद्दों की सुनवाई 12.2.2001 को शुरू हुई और सुनवाई की कई तारीखों तक जारी रही। सभी मुद्दों पर सुनवाई पहले ही समाप्त हो चुकी होने के बावजूद 19.3.2001 को नफे सिंह ने उच्च न्यायालय से अनुरोध किया कि उच्च न्यायालय द्वारा पहले उस के अपराधिक अपील का फैसला किया जाए ताकि उस के आरोपों से बरी होने की स्थिति में, उसे *श्री मन्नी लाल बनाम श्री परमई लाल एवं अन्य,* [1970] 2 एस.सी.सी. 462 तथा *विद्या चरण शुक्ला बनाम पुरुषोत्तम लाल कौशिक,* [1981] 2 एस.सी.सी. 84 मामलों में इस न्यायालय द्वारा दिए गए फैसलों का लाभ मिल सके। प्रत्यर्थी-नफ़े सिंह द्वारा की गई प्रार्थना का अपीलार्थी की ओर से विरोध किया गया था। हालांकि, विद्वान नामित चुनाव न्यायाधीश ने सुनवाई को 27.4.2001 और फिर 3.5.2001 तक स्थगित कर दिया, और इस तारीख को फैसला रिज़र्व कर लिया गया। जब चुनाव याचिका में फैसले की प्रतीक्षा की जा रही थी, तब 1.8.2001 को उच्च न्यायालय की एक डिविज़न पीठ ने प्रत्यर्थी सं 1 नफ़े सिंह द्वारा दायर आपराधिक अपील का फैसला किया। अपील को स्वीकृत किया गया और प्रत्यर्थी संख्या 1 को बरी करने का निर्देश दिया गया। डिवीज़न पीठ का निर्णय स्वयं के गुण-दोष पर स्वतंत्र रूप से आगे बढ़ता है, लेकिन एक बात जो उच्च न्यायालय की डिवीजन पीठ के दिनांक 1.8.2001 के फैसले से ध्यान देने योग्य है, वह यह है कि शिकायतकर्ता और अन्य घायल व्यक्तियों ने आरोपी (प्रत्यर्थी संख्या 1) के साथ अपने मतभेदों को सुलझा लिया था और समझौता किया था। 15 व्यक्ति जिन्हों ने गवाह के रूप में मुकदमे में अभियोजन पक्ष के मामले का समर्थन किया था, अब अपीलीय न्यायालय के समक्ष अपने हलफनामे दायर किए थे, जिस में उन्होंने निचली अदालत में पहले दिए गए अपने बयानों को अस्वीकार कर दिया था और कहा था (जैसा कि उच्च न्यायालय ने अपने फैसले में दर्ज किया है), "कि पक्षों ने अपने विवादों में समझौता

किया था और प्राथमिकी संदेह के कारण और कुछ व्यक्तियों के उकसावे पर दर्ज किया गया और ऐसी कोई घटना नहीं हुई थी।

21.8.2001 को नफे सिंह पर, प्रत्यर्थी संख्या 1 ने अपने बरी होने के अपीलीय निर्णय को चुनाव याचिका के अभिलेख पर लाने हेतु एक आवेदन दायर किया। 20.12.2001 को इस अपीलार्थी ने माननीय उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश से निर्वाचन याचिका में निर्णय के लिए अनुग्रह किया। 25.2.2002 को अपीलार्थी ने विद्वान नामित चुनाव न्यायाधीश के समक्ष प्रार्थना करते हुए एक आवेदन दायर किया कि जल्द से जल्द निर्णय की घोषणा की जाए। निर्णय 5.7.2002 को सुनाया गया। चुनाव याचिका को खारिज करने का निर्देश दिया गया था। उच्च न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए कई निष्कर्षों में से दो, जो इस अपील के उद्देश्य हेतु प्रासंगिक हैं, इस प्रकार हैः-

(i) प्रत्यर्थी द्वारा दायर अपील के मद्देनज़र उस की दोषसिद्धि और उस पर सज़ा क्रमशः दिनांक 17.5.1999 और 19.5.1999 ऐसे मिट गए जैसे कि कभी कोई दोषसिद्धि नहीं हुई थी, जैसा कि *श्री मन्नी लाल* (उपरोक्त) और *विद्या चरण शुक्ला* (उपरोक्त) के मामलों में इस न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण है।

(ii) अपनी दोषसिद्धि की तारीख को नफ़े सिंह विधान सभा के सदस्य थे और इसलिए, आर.पी.ए. की धारा 8 की उप-धारा (4) में निहित प्रावधानों को देखते हुए, दोषसिद्धि तीन महीने की अवधि के लिए प्रभावी नहीं हुई और चूंकि उस अवधि के भीतर एक अपील दायर की गई थी जो नफे सिंह के नामांकन और चुनाव की तारीख को लंबित थी और उसका निपटारा नहीं किया गया था, इसलिए वह उक्त प्रावधान द्वारा संरक्षित था और अयोग्यता प्रभावी नहीं हुई थी।

अपीलों में कार्यवाहीः

दोनों मामलों में चुनाव याचिकाकर्ताओं ने आर.पी.ए. की धारा 116ए के तहत यह दो वैधानिक अपीलें दायर की हैं।

1.10.2002 को सी.ए. सं 8213/2001 इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष सुनवाई के लिए आई, जिस ने *विद्या चरण शुक्ला* (ऊपरोक्त) और *मन्नी लाल* (ऊपरोक्त) के मामलों में लिए गए विचार की शुद्धता के बारे में संदेह व्यक्त किया, जिस में से पहला निर्णय तीन-न्यायाधीशों की पीठ द्वारा लिया गया निर्णय था, और इसलिए, मामले को संविधान पीठ द्वारा विचार के लिए रखने का निर्देश दिया गया। पीठ ने यह भी महसूस किया कि इस मामले में निर्णय के लिए उत्पन्न होने वाला अन्य मुद्दा, कि क्या आर. पी. ए. की धारा 8 (3) की प्रयोज्यता तभी आकर्षित होगी जब किसी व्यक्ति को किसी एक अपराध के लिए कम से कम 2 साल के कारावास की सजा सुनाई जाती है, और यह भी एक ऐसा सवाल था जिस के दूरगामी असर थे और चूंकि इस प्रश्न पर इस न्यायालय द्वारा पहले कोई निर्णय नहीं लिया गया है, इस लिए इस मुद्दे पर, यह सार्वजनिक हित में होगा कि संविधान पीठ द्वारा इस प्रश्न पर एक आधिकारिक घोषणा की जाए, ताकि कानून निश्चित किया जा सके और इस लिए इस अन्य प्रश्न को भी संविधान पीठ के समक्ष रखने का निर्देश दिया गया। संविधान पीठ द्वारा विचार के लिए दिया गया निर्देश [2002] 8 एस.सी.सी 79 में प्रकाशित है।

सी. ए. सं. 6691/2002 इस न्यायालय के समक्ष 7.4.2003 को सुनवाई के लिए आया। इस अपील में निर्णय के लिए उत्पन्न होने वाले एक समान प्रश्न को देखते हुए इसे सी. ए. संख्या 8213/2001 के साथ टैग करने का निर्देश दिया गया। इस तरह दोनों अपीलें इस संविधान पीठ के समक्ष सुनवाई के लिए आई हैं।

निर्णय के लिए तीन प्रश्न उठते हैंः.

(1) क्या निर्वाचन की तारीख के बाद की तारीख का अपीलीय निर्णय जिस का उम्मीदवार की दोषसिद्धी अथवा सज़ा पर असर हो, का प्रभाव उस उम्मीदवार के अयोग्यता को

पूर्ववर्ती रूप से मिटाने का होगा यदि किसी व्यक्ति को किसी अपराध के लिए दोषी ठहराए जाने और कम से कम 2 साल के कारावास की सजा दिए जाने के परिणामस्वरूप नामांकन दाखिल करने और चुनाव लड़ने की तारीख को नामांकन दाखिल करने और चुनाव लड़ने के लिए अयोग्य घोषित किया गया था।

(2) लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 की उप-धारा (3) में नियोजित "किसी भी अपराध के लिए दोषी ठहराए गए व्यक्ति और कम से कम 2 साल के कारावास की सज़ा" अभिव्यक्ति का क्या अर्थ है? क्या यह आवश्यक है कि अयोग्यता को आकर्षित करने के लिए कम से कम 2 साल के कारावास की अवधि एक ही अपराध के संबंध में होनी चाहिए।

(3) आर. पी. ए. की धारा 8 की उप-धारा (4) का उद्देश्य क्या है? क्या उप-धारा (4) द्वारा सदन के किसी सदस्य को अयोग्यता के विरुद्ध दिया गया संरक्षण तब भी लागू रहेगा जब उम्मीदवार नामांकन या चुनाव की तारीख को किसी राज्य की संसद या विधान-सभा का सदस्य नहीं रह गया था?

प्रासंगिक प्रावधान

कानून के प्रासंगिक प्रावधानों को निम्नानुसार निर्धारित किया जा सकता हैः.

भारत का संविधान

अनुच्छेद 191 "सदस्यता के लिए निरर्हताएं- (1) कोई व्यक्ति किसी राज्य की विधान सभा या विधान परिषद का सदस्य चुने जाने के लिए निरर्हित होगा-

X X X

(ङ) यदि वह संसद द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस प्रकार निरर्हित कर दिया जाता है।

X X X

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951

"8. कपितय अपराधों के लिए दोषसिद्धि पर निरर्हता-

X X X

(3) कोई व्यक्ति जो [उपधारा (1) य (2) में निर्दिष्ट किसी अपराध से भिन्न] किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया गया है और दो वर्षों से अन्यून के कारावास के दंडादिष्ट किया गया है, ऐसी दोषसिद्धी की तारीख से निरर्हित होगा और उसे छोडे जाने से छह वर्ष की अतिरिक्त कालावधि के लिए निरर्हित बना रहेगा।

(4) [उप-धारा (1), उप-धारा (2) या उप-धारा (3) में] किसी बात के होते हुए भी दोनों उपधाराओं में से किसी के अधीन निरर्हता उस व्यक्ति की दशा में जो दोषसिद्धि की तारीख को संसद या राज्य के विधानमंडल का सदस्य है, तब तक प्रभावशील नहीं होगी जब तक उस तारीख से तीन मास बीत गए हों, अथवा, यदि उस कालावधि के भीतर उस दोषसिद्धि या दंडादेश की बाबत अपील या पुनरीक्षण के लिए आवेदन किया गया है तो जब तक न्यायालय द्वारा उस अपील या आवेदन का निपटारा न हो गया हो।"

"100. चुनाव को शून्य घोषित करने के आधार- (1) उप-धारा (2) के उपबंधों के अध्यधीन रहते हुए, यह कि यदि उच्च न्यायालय यह राय है कि-

(क) निर्वाचित अभ्यर्थी से निर्वाचन की तारीख को स्थान भरने के लिए चुने जाने कि लिए संविधान या इस अधिनियम के या संघ या राज्यक्षेत्र शासन अधिनियम, 1963 (1963 का 20) के अधीन अर्हित नहीं था या निरर्हित कर दिया गया था, अथवा

(घ) जहां तक कि निर्वाचन का परिणाम निर्वाचित अभ्यर्थी से सम्पृक्त है, वहां तक निर्वाचन परिणाम-

(i) कोई नामनिर्देशन के अनुचित प्रतिग्रहण से, अथवा

(ii) ऐसे किसी भ्रष्ट आचरण से, जो निर्वाचित अभ्यर्थी के हित में उसके निर्वाचन अभिकर्ता से भिन्न अभिकर्ता द्वारा किया गया है, अथवा

(iii) किसी मत के अनुचित तौर पर लिए जाने से इनकार करने या प्रतिक्षेपित किए जाने के या ऐसे किसी मत के लिए जाने के, जो शून्य हो, कारण से, अथवा

(iv) संविधान के या अधिनियम के या इस अधिनियम के अधीन बनाए गए किन्हीं नियमों या आदेशों के उपबंधों के किसी अनुपालन से, तात्विक रूप से प्रभावित हुआ है,

तो उच्च न्यायालय निर्वाचित अभ्यर्थी के निर्वाचन के बाबत यह घोषणा करेगा कि वह शून्य है।

हमने फैसले के पहले भाग में दोनों मामलों से संबंधित ऐसे तथ्यों को संक्षेप में बताया है जो विवाद में नहीं हैं। पक्षकारों के लिए विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा दी गई दलीलों पर विचार करने से पहले, *श्री मन्नी लाल* (ऊपर) और *विद्या चरण शुक्ला* (ऊपर) के प्रासंगिक तथ्यों और निर्धारित कानून को संक्षेप में उल्लेखित करना उचित होगा।

श्री मन्नी लाल का मामला

मन्नी लाल का मामला (उपरोक्त) इस न्यायालय का दो- न्यायाधीशों की पीठ का निर्णय है। परमई लाल, उस विवाद में प्रत्यर्थी संख्या 1 ने 9.1.1969 को अपना नामांकन दाखिल किया। दो दिनों के बाद, 11.1.1969 को, उन्हें आई. पी. सी. की धारा 304 के तहत अपराध के

लिए दोषी ठहराया गया और 10 साल के कठोर कारावास की सज़ा सुनाई गई। 16.1.1969 को उन्होंने उच्च न्यायालय में अपनी दोषसिद्धि के खिलाफ अपील दायर की। मतदान 9.2.1969 को हुआ। परमई लाल को 11.2.1969 पर निर्वाचित घोषित किया गया। 30.9.1969 को परमई लाल द्वारा दायर अपील को उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकृत कर लिया गया और उनकी दोषसिद्धि और सज़ा को दरकिनार कर दिया गया। उस समय, परमई लाल के निर्वाचन को चुनौती देने वाली एक चुनाव याचिका लंबित थी जिसे 27.10.1969 को दिए गए फैसले द्वारा तय किया गया। उच्च न्यायालय ने परमई लाल को आर. पी. ए. की धारा 8 (2) के तहत अयोग्य ठहराने से इनकार कर दिया। मन्नी लाल ने इस अदालत में एक अपील दायर की। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एक आपराधिक मामले में अपील में बरी होना केवल दोषसिद्धि को दरकिनार करने वाले अपीलीय आदेश की तारीख से प्रभावी नहीं होता है; इसका प्रभाव पूर्वव्यापी रूप से दोषसिद्धि और निचली अदालत द्वारा दी गई सजा को समाप्त करने का है।

भार्गव, न्या. ने पीठ की ओर से बोलते हुए कहा- "यह सच है कि इस बारे में राय बनानी होगी कि क्या सफल उम्मीदवार अपने चुनाव की तारीख को अयोग्य घोषित किया गया था; लेकिन यह राय चुनाव याचिका में निर्णय सुनाने के समय उच्च न्यायालय द्वारा बनाई जानी है। इस मामले में उच्च न्यायालय ने 27 अक्टूबर, 1969 को फैसला सुनाया। उच्च न्यायालय के समक्ष बरी करने का आदेश था जो 11 जनवरी, 1969 से पूर्वव्यापी रूप से प्रभावी हुआ था। इसलिए, उच्च न्यायालय के लिए इस राय पर पहुंचना असंभव था कि 9 या 11 फरवरी, 1969 को प्रत्यर्थी संख्या 1 को अयोग्य घोषित कर दिया गया था। दोषसिद्धि और सज़ा को पूर्वव्यापी रूप से मिटा दिया गया था, ताकि चुनाव को अमान्य घोषित करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा गठित की जाने वाली राय का गठन न किया जा सके।" भार्गव, जे. की राय में अपीलीय न्यायालय द्वारा बरी किए जाने का प्रभाव किसी अधिनियम के निरस्त किए जाने के प्रभाव के समान था। न्यायमूर्ति के शब्दों में- "यह उस स्थिति के समान है जो

अस्तित्व में आ सकती थी यदि संसद ने स्वयं 11 जनवरी, 1969 (परमई लाल को दोषी ठहराए जाने के दिन) से अधिनियम की धारा 8 (2) को पूर्वव्यापी रूप से निरस्त करने का विकल्प चुना होता। विद्वान अधिवक्ता ने स्वीकार किया कि यदि अधिनियम की धारा 8 (2) को निरस्त करने वाला कोई कानून पारित किया गया होता और कानून को 11 जनवरी, 1969 से लागू माना गया होता, तो वह संभवतः इसके बाद आग्रह नहीं कर सकते थे, जब यह मुद्दा उच्च न्यायालय के समक्ष आता, कि प्रत्यर्थी संख्या 1 को 9 या 11 फरवरी, 1969 को अयोग्य घोषित किया गया था। अपील में दोषसिद्धि और सज़ा को दरकिनार करने से अयोग्यता को पूर्वव्यापी रूप से समाप्त करने का समान प्रभाव पड़ता है। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करना सही था कि प्रत्यर्थी नं. 1 को अयोग्य नहीं ठहराया गया था और उनका चुनाव उस आधार पर अमान्य नहीं था।" इस तर्क पर इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के फैसले को बरकरार रखा कि परमई लाल का चुनाव इस आधार पर अमान्य नहीं था की चुनाव व परिणाम की तारीखों पर उन की दोषसिद्धि हो चुकी थी।

विद्या चरण शुक्ला का मामला

विद्या चरण शुक्ला का मामला (उपरोक्त) इस न्यायालय का तीन न्यायाधीशों की पीठ का निर्णय है। विद्या चरण शुक्ला को नमांकन भरने की तिथि को सत्र न्यायालय द्वारा दोषी ठहराया जा चुका था और दो वर्षों से अधिक के कारावास की सज़ा सुनाई जा चुकी थी। यह दोषसिद्धि और सज़ा चुनाव की तारीख और परिणाम की घोषणा की तारीख को प्रभावी थी। हालांकि, उच्च न्यायालय ने सज़ा के निष्पादन पर रोक लगा दी थी। असफ़ल उम्मीदवार ने एक चुनाव याचिका दायर की और जब तक चुनाव याचिका पर फैसला होता, तब तक विद्या चरण शुक्ला द्वारा दायर आपराधिक अपील को उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकृत कर लिया गया और उन की दोषसिद्धि और सज़ा को दरकिनार कर दिया गया। *मन्नी लाल* के मामले (ऊपर) पर निर्भर किया गया था और इस अदालत के समक्ष निर्णय के लिए जो संकीर्ण सवाल उठा

था, वह यह था कि यदि चुनौती को धारा 100 के खंड (डी) के (i) और (iv) के तहत एक माना जाए तो क्या यह *मामला मन्नी लाल* के मामले (ऊपर) के अनुपात में आएगा। न्यायालय ने [1976] 1 एस.सी.सी. 560 में प्रकाशित *दलीप कुमार शर्मा बनाम मध्य प्रदेश राज्य* में निर्धारित सिद्धांत पर ध्यान दिया, यह अभिनिर्धारित करने के लिए कि दोषमुक्त करने का आदेश, विशेष रूप से मामले के गुणों के आधार पर पारित किया गया आदेश, सभी उद्देश्यों के लिए दोषसिद्धि और सजा को मिटा देता है और इस तरह प्रभावी होता है जैसे दोषसिद्धि और सजा कभी हुई ही नहीं थी और दोषसिद्धि को रद्द या शून्य करने का आदेश शुरुआत से संचालित होता है। अपराध के लिए दोषसिद्धि को उच्च न्यायालय द्वारा अपील में रद्द करना "दोषसिद्धि को तब नहीं मारता, बल्कि उस आदेश का अंतिम संस्कार करता है जिस की जन्म के समय ही मृत्यु हो गई थी।"

इसके बाद, इस न्यायालय ने *मन्नी लाल* के मामले को संदर्भित किया और उसमें लिए गए विचार के साथ सहमति व्यक्त की, कि, एक बार निर्वाचित उम्मीदवार की अयोग्यता उसके दोषसिद्धि और दो वर्षों के कारावास की सज़ा के कारण हो जाती है, और यह अयोग्यता निर्वाचन की तारीख को एक तथ्य है, तथा उसे बाद में उच्च न्यायालय द्वारा चुनाव याचिका में निर्णय आने से पहले दरकिनार कर दिया जाता है जिस चुनाव याचिका में निर्वाचन को आर.पी.ए की धारा 100(1)(ए) के तहत चुनौती दी गई थी, तो वह चुनाव याचिका विफल होनी चाहिए क्योंकि बरी होने का प्रभाव अयोग्यता को पूरी तरह से और प्रभावी रूप से पूर्वव्यापी रूप से मिटा देने का था जैसे कि यह कभी मौजूद नहीं था। इस से ज्यादा फ़र्क नहीं पड़ता कि नामांकन दाखिल करने और निर्वाचन की तिथि पर एक उम्मीदवार को दोषी ठहराया जा चुका था और वह चुनाव के बाद तब तक बरी हो गया जब तक कि वह उच्च न्यायालय द्वारा चुनाव याचिका में निर्णय की घोषणा की तारीख से पहले था।

मन्नी लाल के मामले (ऊपर) में इस बात पर ज़ोर दिया गया कि अयोग्यता के प्रश्न पर उच्च न्यायालय को उस समय राय बनानी थी जब वह चुनाव याचिका में फैसला सुनाने के लिए आगे बढ़ता है और इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा अयोग्यता के तथ्य का फैसला चुनाव याचिका में फैसले की तारीख के संदर्भ में किया जाना था, *विद्या चरण शुक्ला* के मामले (ऊपर) में भी दोहराया गया था। बरी किए जाने का पूर्वव्यापी प्रभाव नामांकनों की जांच के समय भी अयोग्यता को अस्तित्वहीन बना देने का था।

हालाँकि, उस दुविधा पर ध्यान देना उचित है जिसका सामना न्यायालय ने अपने समक्ष दिए गए एक तर्क पर विचार करते हुए किया और जो निर्णय के पैराग्राफ 39 और 40 में उल्लेखित है। एक प्रस्तुति दी गई, क्या होगा यदि किसी उम्मीदवार का नामांकन इस अयोग्यता के कारण खारिज कर दिया जाता है कि किसी अपराध में उस की दोषसिद्धि हो गई है और उसे दो वर्षों या उस से अधिक कारावास की सज़ा दी गई है जो कि एक तथ्य के रूप में नामांकन के जांच की तिथि को मौजूद था और इस आधार पर वह निर्वाचित उम्मीदवार के चुनाव को चुनौती देने के लिए एक चुनाव याचिका लाता है कि उस का नामांकन अनुचित रूप से खारिज कर दिया गया था और यदि चुनाव याचिका की सुनवाई और निर्णय होने तक, चुनाव याचिकाकर्ता की दोषसिद्धि को आपराधिक अपील में दरकिनार कर दिया जाए, तो उसके बाद बरी होने के परिणामस्वरूप, उस की दोषसिद्धि और सज़ा रद्द कर दी जाए और पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ मिटा दी जाए और उस का यह प्रस्तुत करना उचित होगा कि उस का नामांकन अवैध रूप से खारिज कर दिया गया था और इसलिए, चुनाव का परिणाम भौतिक रूप से प्रभावित हुआ था और परिणाम दरकिनार किए जाने योग्य था। न्यायालय ने उक्त प्रस्तुति को 'काल्पनिक' करार दिया जिस में एक शैक्षणिक अभ्यास की आवश्यकता है जिस में जाने की आवश्यकता नहीं है। यह ध्यान देने योग्य होगा, जैसा कि *विद्या चरण शुक्ला* के मामले में निर्णय के पैरा 40 में दर्ज किया गया है, कि *मन्नी लाल* के मामले में निर्णय की शुद्धता विवादित नहीं थी और एक बड़ी पीठ द्वारा *मन्नी लाल* के मामले के निर्णय पर पुनर्विचार करने

के लिए कोई अनुरोध नहीं किया गया था। *विद्या चरण शुक्ला* के मामले में अदालत के समक्ष एकमात्र निवेदन यह था कि *मन्नी लाल* के मामले का निर्णय अलग था और इसलिए *विद्या चरण शुक्ला* के मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता था। ऐसी परिस्थितियों में, अदालत ने कहा कि "हम स्टेर डेसिसिस के सिद्धांत का पालन करेंगे और *मन्नी लाल* मामले के निर्णय का पालन करेंगे।"

यह स्पष्ट है कि कानून की स्थिति अलग हो सकती है और *विद्या चरण शुक्ला* के मामले का फैसला करने वाली तीन जजों की पीठ *मुन्नी लाल* के मामले में लिए गए दृष्टिकोण की शुद्धता की जांच करने के प्रश्न पर विचार कर सकती थी अगर यह अनुरोध किया गया होता।

अब हम अपने सामने समाधान के लिए रखे गए तीन मुद्दों से निपटने के लिए आगे बढ़ते हैं।

प्रश्न (1):

आर. पी. ए. की धारा 100 की उप-धारा (1) के खंड (ए) के तहत, उच्च न्यायालय को यह तय करना है कि क्या चुनाव की तारीख को संविधान या आर. पी. ए. के तहत सीट भरने के लिए चुने जाने के लिए निर्वाचित उम्मीदवार योग्य नहीं था या अयोग्य था। यदि उत्तर सकारात्मक है, तो उच्च न्यायालय द्वारा निर्वाचित उम्मीदवार के चुनाव को अमान्य घोषित करना अनिवार्य है। जिस केंद्र बिंदु के संदर्भ में अयोग्यता का प्रश्न निर्धारित किया जाएगा, वह चुनाव की तारीख है।

यह सामान्य बात है कि चुनाव लड़ने का अधिकार एक वैधानिक अधिकार है। इस तरह के अधिकार का प्रयोग करने के पात्र होने के लिए व्यक्ति को क़ानून की शर्तों के अनुसार योग्य होना चाहिए। उसे एसी किसी भी अयोग्यता के अधीन नहीं होना चाहिए जो कि निर्वाचक पद के लिए प्रावधान करने वाले क़ानून द्वारा लगाया गया है। इस प्रकार, कार्यालय का निर्माण

करने वाला विधानमंडल उस कार्यालय के पद के लिए लड़ने या उस पद को धारण करने के लिए उम्मीदवार की पात्रता निर्धारित करने के लिए सशक्त है। संविधान स्वयं इस विषय में अनुच्छेद 191 के उप-अनुच्छेद (1) के खंड (ए) से खंड (डी) द्वारा कुछ अयोग्यताओं को निर्धारित करता है। इस के अलावा, खंड (ङ) के माध्यम से यह अनुमति भी देता है, कि संसद द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन उपबंधित कोई अन्य अयोग्यताएँ भी हो सकती हैं। लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 ऐसा ही एक अधिनियम है। यह संसद के सदनों और प्रत्येक राज्य के विधानमंडल के सदनों के चुनाव के संचालन और उन सदनों की सदस्यता के लिए योग्यता और अयोग्यता का प्रावधान करता है।

आर. पी. ए. की धारा 100 की उप-धारा (1) के खंड (घ) के उप-खंड (i) के तहत किसी भी नामांकन की अनुचित स्वीकृति निर्वाचित उम्मीदवार के चुनाव को अमान्य घोषित करने का आधार है। इस प्रावधान को धारा 36 (2) (ए) के साथ पढ़ा जाना चाहिए जो निर्वाचन अधिकारी पर नामांकन पत्रों की जांच करने और किए गए किसी भी नामांकन पर सभी आपत्तियों पर, या स्वयं पाई गईं आपत्तियों पर नामांकन की जांच के लिए निर्धारित तिथि के संदर्भ में निर्णय लेने का दायित्व डालता है। क्या कोई उम्मीदवार योग्य है या योग्य नहीं है या सीट भरने के लिए चुने जाने के लिए अयोग्य है, यह नामांकन की जांच के लिए निर्धारित तिथि के संदर्भ द्वारा निर्धारित किया जाना है। यही केंद्र बिंदु है। चुनावी मैदान में उतरने वाले उम्मीदवारों के नाम और संख्या नामांकन पत्रों की जांच की तारीख पर निर्धारित की जाती है और निर्वाचन क्षेत्र में मतदान होता है। ज़ाहिर है, निर्वाचन अधिकारी द्वारा निर्णय उन तथ्यों पर लिया जाना चाहिए जैसे तथ्य उस दिन मौजूद होते हैं। निर्णय निश्चितता के साथ होना चाहिए। निर्वाचन अधिकारी अपने निर्णय को स्थगित नहीं कर सकता है और न ही उस तारीख के बाद कुछ होने या न होने पर इसे सशर्त बना सकता है। धारा 100(1)(डी)(i) के तहत अधिनियम के उच्च न्यायालय को निर्वाचन अधिकारी द्वारा लिए गए निर्णय की शुद्धता का परीक्षण करना है और यह तथ्य कि क्या किसी नामांकन को धारा 36(2)(ए) में परिभाषित

नामांकन की जांच की तारीख के संदर्भ में अनुचित तरीके से स्वीकार किया गया था। एक चुनाव याचिका की सुनवाई और मुकदमा एक अदालत द्वारा किया जाता है। चुनाव याचिका की कार्यवाही कार्यपालिका द्वारा आयोजित चुनाव कार्यवाही से स्वतंत्र होती है। कल्पना के किसी भी विस्तार से चुनाव याचिका में कार्यवाही को चुनाव के सिलसिले में नहीं कहा जा सकता है। चुनाव याचिका पर सुनवाई करने वाला उच्च न्यायालय निर्वाचन अधिकारी के फैसले या उम्मीदवार के परिणाम की घोषणा के खिलाफ अपील पर सुनवाई नहीं कर रहा है।

श्री *मन्नी लाल* (उपरोक्त) के मामले में फैसला करने वाले विद्वान न्यायाधीशों के संबंध में, जिस भ्रांति से यह निर्णय प्रभावित होता है, वह संभवतः एक धारणा है कि चुनाव याचिका की कार्यवाही चुनाव कार्यवाही के सिलसिले में है। फिर भी, एक और भ्रांति जिस से यह निर्णय, हमारी विनम्र राय में, पीड़ित है, वह इस से है जैसे कि उच्च न्यायालय को चुनाव याचिका में निर्णय लेते समय किसी उम्मीदवार की अयोग्यता पर राय बनानी होगी। यह बात सही नहीं है। नि:संदेह, उच्च न्यायालय द्वारा चुनाव याचिका में निर्णय की तारीख पर एक राय बनाई जा रही है, लेकिन वह राय जांच की तारीख के संदर्भ में बनाई जानी चाहिए, न कि ऐसे तथ्यों के आधार पर जो काल्पनिक रूप से किसी बाद की घटना द्वारा निर्धारित पिछली तारीख को मौजूद माने जा सकते हैं, बल्कि उन तथ्यों के आधार पर जो वास्तव में तब मौजूद थे, ताकि यह पता लगाया जा सके कि क्या निर्वाचन अधिकारी उस तारीख यानी जांच की तारीख को नामांकन की जांच पर अपने निर्णय में सही थे या गलत। निर्वाचन अधिकारी द्वारा लिए गए निर्णय की शुद्धता ऐसी किसी भी घटना से निर्धारित नहीं की जा सकती जो जांच की तारीख और उच्च न्यायालय द्वारा निर्णय की घोषणा की तारीख के बीच हुई हो।

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि *श्री मन्नी लाल* के मामले में लिए गए दृष्टिकोण की शुद्धता पर *विद्या चरण शुक्ला* के मामले में सवाल नहीं उठाया गया और केवल *श्री मन्नी लाल* के मामले में अंतर करने का प्रयास किया गया। कानून के किसी प्रावधान की व्याख्या करते समय और

किसी वैधानिक प्रावधान के सही अर्थ पर निर्णय देते समय न्यायालय को यह ध्यान रखना होगा कि उस के द्वारा लिए गए निर्णय का दृष्टिकोण उन असंख्य स्थितियों पर लागू होगा जिन के उत्पन्न होने की संभावना है। यह भी अच्छी तरह से तय है कि इस तरह की व्याख्या से बचा जाना चाहिए जिस से किसी भी प्रणाली के काम करने में भ्रम, विसंगति, अनिश्चितता और व्यावहारिक कठिनाइयाँ पैदा हों। इस सिद्धांत के आधार पर *विद्या चरण शुक्ला* मामले में तीन न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष एक निवेदन प्रस्तुत किया गया था, लेकिन दुर्भाग्य से अदालत का ध्यान इस राय पर नहीं गया और अदालत ने यह राय ली कि उस निवेदन (हालांकि बलपूर्वक) पर अध्ययन करना 'काल्पनिक और शैक्षणिक अभ्यास' में लिप्त होने के बराबर होगा।

हम केवल यह स्पष्ट कर सकते हैं कि यदि *श्री मन्नी लाल* और *विद्या चरण शुक्ला* के मामलों में लिए गए कानून के दृष्टिकोण को बरकरार रखा जाए तो क्या विसंगतियां और अजीब बातें सामने आएंगी। *विद्या चरण शुक्ला* के मामले के पैरा 39 में ऐसी ही एक स्थिति का उल्लेख किया गया है। एक उम्मीदवार का नामांकन इस आधार पर खारिज किया जा सकता है कि नामांकन की जांच की तारीख से पहले उसे किसी अपराध के लिए दोषी ठहराया गया है और से दो वर्षों या उस से अधिक कारावास की सज़ा सुनाई गई है। चुनाव याचिका की सुनवाई के दौरान यदि ऐसे उम्मीदवार को अपील में दोषमुक्त और बरी कर दिया जाता है, तो उस का नामांकन अनुचित रूप से खारिज माना जाएगा और चुनाव इस तथ्य की परवाह किए बिना रद्द कर दिया जाएगा कि चुनाव का परिणाम भौतिक रूप से प्रभावित हुआ था या नहीं। एक और मामला लीजिए। चुनावी मैदान में कई उम्मीदवारों में से दो को नामांकन की तारीख से पहले दोषी ठहराया जा सकता है। जब तक चुनाव याचिका पर निर्णय लिया जाता है, तब तक एक को अपील में बरी कर दिया जाए और दूसरे की दोषसिद्धि को बरकरार रखा जाए और जब तक इस न्यायालय में आर. पी. ए. की धारा 116 ए के तहत अपील पर निर्णय लिया जाता है, तब तक एक की दोषसिद्धि को दरकिनार कर दिया जाए और साथ ही, दूसरे को बरी

करने के फैसले को भी दरकिनार कर दिया जाए। तब चुनाव याचिका में उच्च न्यायालय के निर्णय को उलट दिया जा सकता है, इस लिए नहीं कि वह गलत था, बल्कि इस लिए कि उस निर्णय के बाद कुछ हुआ है। इस प्रकार, चुनाव के परिणाम को इस लिए बरकरार या रद्द नहीं रखा जा सकता है क्यों कि कोई विशेष उम्मीदवार नामांकन की जांच की तारीख या उसके चुनाव की तारीख को योग्य या अयोग्य था, बल्कि इस लिए क्यों कि उन तारीखों के बहुत बाद उस उम्मीदवार को बरी किया गया है या दोषी ठहराया गया है। कानून का इरादा ऐसा नहीं हो सकता था।

हमारी यह भी राय है कि *श्री मन्नी लाल* (उपरोक्त) के मामले का निर्णय करने वाले विद्वान न्यायाधीशों ने अपील में बरी होने के मामले की तुलना वैधानिक संशोधन द्वारा पूर्वव्यापी प्रभाव से लागू अयोग्यता के साथ करने में सही नहीं थे।

विद्या चरण शुक्ला (ऊपर) के मामले में *दलीप कुमार शर्मा* (ऊपर) के मामले पर निर्भर किया गया है जो, हमारी राय में, चुनाव और चुनाव याचिका के मामले में लागू नहीं किया जा सकता है।

दलीप कुमार शर्मा (ऊपर) का मामला धारा 303 आई. पी. सी. के तहत दोषसिद्धि का मामला है। एक 'प' की हत्या 24.10.1971 को की गई थी। 18.5.1972 को अभियुक्त को आजीवन कारावास की सज़ा सुनाई गई। 20.6.1973 को अभियुक्त ने 'ए' की हत्या की और 24.1.1974 को इस हत्या के लिए दोषी ठहराया गया और धारा 303 आई. पी. सी. के तहत मौत की सज़ा सुनाई गई। 'पी' की हत्या के लिए दोषसिद्धि के खिलाफ अपील में, अभियुक्त को 27.2.1974 को बरी कर दिया गया। उसी दिन उच्च न्यायालय ने धारा 303 आई. पी. सी. के तहत अभियुक्त की मौत की सज़ा की पुष्टि यह कहते हुए की, कि जिस तारीख को अभियुक्त ने 'ए' की हत्या की थी, वह 'पी' की हत्या के लिए आजीवन कारावास की सजा काट रहा था। इस अदालत के समक्ष दायर अपील में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि मौत की सजा को

बरकरार नहीं रखा जा सकता क्योंकि आरोपी पहली हत्या के अपराध से बरी हो गया था और अपील में बरी होने का प्रभाव पहली हत्या में दोषसिद्धि को समाप्त करने का था। आई. पी. सी. की धारा 303 के तहत मृत्युदंड की अनिवार्य सज़ा दूसरे अपराध के लिए बरकरार नहीं रखी जा सकती।

चार कारक प्रासंगिक हैं। सबसे पहले, मृत्युदंड की सज़ा न्यायिक कार्यवाही में पारित की गई थी और चूंकि निचली अदालत के फैसले के ख़िलाफ़ अपील उसी न्यायिक कार्यवाही की निरंतरता में थी, इस लिए अदालत बाद की घटनाओं पर ध्यान देने में असमर्थ नहीं थी। मौत की सज़ा एक ऐसी घटना के आधार पर पारित की गई थी जिस का अस्तित्व अपील के लंबित रहने के दौरान ख़त्म हो गया था। न्यायालय न केवल शक्तिहीन नहीं था, बल्कि इस तरह की बाद की घटना पर ध्यान देने के लिए बाध्य था, जिस में विफल रहने पर अभियुक्त के साथ गंभीर अन्याय हो जाता। दूसरा, अदालत ने धारा 303 आई. पी. सी. की व्याख्या की, जो "आजीवन कारावास की सज़ा" वाले व्यक्ति की बात करती है, जिस का अर्थ है आजीवन कारावास की कार्यात्मक, निष्पादन योग्य सज़ा के अधीन व्यक्ति। एक सज़ा जिसे एक बार दिया जाए परंतु बाद में दरकिनार कर दिया जाए, एक निष्पादन योग्य सज़ा नहीं है और इस लिए, धारा 303 आई. पी. सी. के उद्देश्य के लिए प्रासंगिक नहीं रह जाती है। तीसरा, दोषसिद्धि की तारीख केंद्र बिंदु थी जब अदालत को सज़ा सुनाने के लिए कहा गया था। चौथा, यह ध्यान देना उचित है कि अदालत ने जिस सुस्थापित सिद्धांत पर ज़ोर दिया था, वह यह था कि- "कोई कार्यवाही करने वाली अदालत को उस कार्यवाही की शुरुआत के बाद की घटनाओं पर ध्यान देना चाहिए", जो स्थिति, अदालत ने अभिनिर्धारित किया, उचित संशोधनों के साथ दीवानी और आपराधिक दोनों कार्यवाहीयों पर लागू होती है। उस कार्यवाही की शुरुआत के बाद होने वाली घटनाओं पर ज़ोर दिया जाता है। वर्तमान मामलों में, *दलीप कुमार शर्मा* (उपरोक्त) मामले में निर्धारित सिद्धांत लागू नहीं होगा क्यों कि नामांकन पत्र की वैधता का परीक्षण जांच

की तारीख के दिन उम्मीदवार की योग्यता या अयोग्यता का निर्णय कर के होगा न कि उस के बाद की किसी घटना के संदर्भ में।

ए. आई. आर. (1968) एस. सी. 1455 में प्रेषित *अमृत लाल अंबालाल पटेल बनाम हिमथभाई गोमनभाई पटेल एवं अन्य* मामले में इस न्यायालय का निर्णय इस सिद्धांत का समर्थन करता है कि किसी उम्मीदवार की योग्यता निर्धारित करने के लिए महत्वपूर्ण तिथि नामांकन की जांच की तिथि है, और बाद की ऐसी किसी घटना जिस से उम्मीदवार की अयोग्यता मिट जाए, को नज़रंदाज़ करना है।

एक आपराधिक मामले में एक अपीलीय निर्णय, जो अभियुक्त-अपीलार्थी को दोषमुक्त करता है, परीक्षण द्वारा दर्ज दोषसिद्धि को समाप्त करने का प्रभाव रखता है और उस पर पारित सज़ा एक कानूनी कल्पना रह जाती है। कानूनी कल्पना पर ज़ोर देते समय यह नहीं भूलना चाहिए कि कानूनी कल्पनाएँ केवल किसी निश्चित उद्देश्य के लिए की जाती हैं और कल्पना उस उद्देश्य तक सीमित होनी चाहिए जिसके लिए उसे किया गया था और इसे उस वैध क्षेत्र से आगे नहीं बढ़ाया जाना चाहिए। एक कानूनी कल्पना उन तथ्यों के अस्तित्व का अनुमान लगाती है जो मौजूद नहीं हैं और फिर उन परिणामों का पता लगाती है जो उन तथ्यों से निकलते हैं। इस तरह के परिणामों को केवल उनकी तार्किक सीमा तक उस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए तैयार किया जाना चाहिए जिस के लिए कानूनी कल्पना की गई है। तार्किक रूप से जो प्रवाहित होता है उस से परे परिणामों को फैलाना कानूनी कल्पना के उद्देश्य के अवैध विस्तार के बराबर है (देखें, *बंगाल इम्यूनिटी कंपनी बनाम बिहार राज्य*, ए.आई.आर (1955) एस.सी 661 में बहुमत की राय)। पी. एन. भगवती, जे., जैसे की न्यायमूर्ति उस समय थे, ने बहुमत के साथ सहमति जताते हुए और संविधान के अनुच्छेद 286 (1) (ए) के स्पष्टीकरण (जैसा कि यह छठे संशोधन से पहले था) में निहित कानूनी कल्पना पर चर्चा करते हुए अपनी अलग राय में कहा, "इस संबंध में उस उद्देश्य को ध्यान में रखा जाना चाहिए जिसके लिए

कानूनी कल्पना की गई है। यदि अनुच्छेद 286 (1) (ए) के स्पष्टीकरण में निहित इस कानूनी कल्पना का उद्देश्य केवल उपखंड (ए) के उद्देश्य के लिए है जैसा कि स्पष्ट रूप से कहा गया है तो उस उद्देश्य के दायरे से परे यात्रा करना और किसी भी अन्य उद्देश्य को प्रावधान में पढ़ना वैध नहीं होगा, चाहे वह कितना भी आकर्षक क्यों न हो। यहां जो कानूनी कल्पना की गई थी, वह केवल यह निर्धारित करने के उद्देश्य से थी कि क्या कोई विशेष बिक्री एक बाहरी बिक्री थी या जिसे राज्य के अंदर हुई बिक्री मानी जा सकती थी और यही इस प्रावधान का एकमात्र दायरा था। यह कहना कानूनी कल्पना के उद्देश्य का एक अवैध विस्तार होगा कि इसे लेन-देन के अंतर-राज्यीय चरित्र को राज्यीय चरित्र में बदलने के उद्देश्य से भी बनाया गया था। माननीय न्यायमूर्ति का मानना था कि इस प्रकार का बदलाव उस स्पष्ट उद्देश्य के विपरीत होगा जिस के लिए कानूनी कल्पना की गई थी। ये अवलोकन हमारे सामने प्रस्तुत मुद्दे से निपटने के उद्देश्य से उपयोगी है। काल्पनिक रूप से, एक अपील में बरी होने से निचली अदालत की दोषसिद्धि मिट जाती है; फिर भी, इस तरह की कानूनी कल्पना के बल पर यह निर्धारित कर देना कि एक उम्मीदवार नामांकन के जांच की तारीख को अपनी दोषसिद्धी एवं दो वर्ष या उससे अधिक के कारावास की सज़ा पाने के बाद भी अयोग्य सिर्फ़ इसलिए नहीं था क्योंकि उस के कई समय बाद उसे बरी कर दिया गया, इस कानूनी कल्पना के उद्देश्य का अवैध विस्तार होगा। हालांकि, हम यह जोड़ने के लिए आतुर हैं कि वर्तमान मामले में मुद्दा कानूनी कल्पना की प्रयोज्यता के लिए इतना नहीं है; मुद्दा नामित चुनाव न्यायाधीश की बाद की घटना पर संज्ञान लेने और उसे उस घटना पर लागू करने की शक्ति के बारे में ज़्यादा है जो उस कार्यवाही के शुरू होने से बहुत पहले हुई थी और जिस बाद की घटना को न्यायालय के ध्यान में लाया जाता है। चुनाव याचिका चुनाव की निरंतरता में नहीं है।

हमारा स्पष्ट मत है कि *श्री मन्नी लाल* (ऊपर) और *विद्या चरण शुक्ला* (ऊपर) के मामले सही कानून निर्धारित नहीं करते हैं। इसलिए, दोनों निर्णयों को खारिज किया जाता है।

कानून की सही स्थिति यह है कि ऐसा व्यक्ति जो धारा 36 (2) (ए) के तहत नामांकन की जांच की तारीख को आर. पी. ए. की धारा 8 की उप-धारा (3) के अर्थ के भीतर अयोग्य था, उस व्यक्ति के नामांकन को अवैध करार दे कर खारिज किया जाना चाहिए और निर्वाचन अधिकारी के ऐसे निर्णय को इस लिए अवैध नहीं माना जा सकता है या केवल इस लिए नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता है क्योंकि दोषसिद्धि को दरकिनार कर दिया गया है या आपराधिक अपील या संशोधन में बाद के निर्णय के परिणामस्वरूप इस तरह से बदल दिया गया है कि वह आर. पी. ए. की धारा 8 (3) के दायरे से बाहर चला गया है।

धारा 8 (3) के प्रयोजन के लिए जो प्रासंगिक है वह कारावास की वास्तविक अवधि है जिस से किसी भी दोषी व्यक्ति को न्यायालय द्वारा घोषित कारावास की सज़ा के परिणामस्वरूप गुज़रना होगा या जिस से दोषी गुज़र चुका है और जिसे नामांकन की जांच की तारीख या चुनाव की तारीख के संदर्भ में देखा जाना चाहिए। अन्य सभी कारक अप्रासंगिक हैं। दोषी ठहराए गए व्यक्ति ने अपील दायर की होगी। हो सकता है कि उस ने दंड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 389 के तहत सज़ा के निष्पादन को या सज़ा के आदेश को निलंबित करने का आदेश भी प्राप्त कर लिया हो। लेकिन इसका कोई असर नहीं होगा। अपील न्यायालय को धारा 389 के तहत यह आदेश देने का अधिकार है कि किसी दोषी व्यक्ति द्वारा अपील लंबित रहने तक सज़ा या आदेश के निष्पादन को निलंबित कर दिया जाए और साथ ही, यदि वह हिरासत में है, तो उसे ज़मानत या मुचलके पर रिहा किया जाए। जिसे निलंबित किया जाता है वह दोषसिद्धि या सज़ा नहीं है; यह केवल सज़ा या आदेश का निष्पादन है जिसे निलंबित किया जाता है। यह निलंबित है, इसे मिटाया नहीं गया है। इस संदर्भ में [1961] 2 एस.सी.आर 133 में प्रेषित *शरत चंद्र राभा एवं अन्य बनाम खगेन्द्रनाथ नाथ एवं अन्य* के मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ के फैसले का उल्लेख करना उपयोगी होगा। दोषी ने सज़ा में क्षमा पा ली थी और क्षमा की अवधि से कम हुई कारावास की अवधि का प्रभाव अयोग्यता को हटाने का होता क्योंकि वास्तविक कारावास की अवधि दो साल से कम हो जाती। संविधान

पीठ ने कहा कि दंड प्रक्रिया संहिता (पुरानी) की धारा 401 के तहत सज़ा में छूट और दो साल के वास्तविक कारावास से पहले जेल से उनकी रिहाई का मतलब ये नहीं होगा कि न्यायालय द्वारा दी गई उनकी सज़ा की अवधि दो साल से कम हो गई और वह अयोग्यता से बच गए। "क्षमा का आदेश किसी भी तरह से अदालत के आदेश में हस्तक्षेप नहीं करता है; यह केवल अदालत द्वारा पारित सज़ा के निष्पादन को प्रभावित करता है और दोषी व्यक्ति को अदालत द्वारा लगाए गए कारावास की पूरी अवधि से गुज़रने के अपने दायित्व से मुक्त करता है, हालांकि अदालत द्वारा पारित दोषसिद्धि और सज़ा के आदेश अभी भी वैसे ही हैं जैसे पहले थे। क्षमा करने की शक्ति कार्यकारी शक्ति है और इसका प्रभाव वह नहीं हो सकता है जो किसी अपीलीय या पुनरीक्षण न्यायालय के आदेश में विचारण न्यायालय द्वारा पारित सज़ा को कम कर के उसके स्थान पर अपीलीय या पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा निर्णयित कम सज़ा को प्रतिस्थापित करने का है।"

[2001] 7 एस.सी.सी. 331 में प्रेषित *बी. आर. कपूर बनाम टी. एन. राज्य एवं अन्य,* मामले में एक समान प्रश्न, यद्यपि थोड़े भिन्न संदर्भ में, संविधान पीठ के विचार के लिए उत्पन्न हुआ था। पैरा 44 में न्यायालय ने *विद्या चरण शुक्ला* के मामले का संदर्भ दिया, लेकिन कहा कि यह एक चुनाव याचिका का मामला था और इसलिए इसका संविधान के अनुच्छेद 164 की व्याख्या पर कोई प्रभाव नहीं होगा, जो संविधान पीठ के समक्ष मुद्दा था। ज़ाहिर है कि *विद्या चरण शुक्ला* के मामले में निर्धारित कानून की शुद्धता पर विचार करने की आवश्यकता नहीं थी। लेकिन फिर भी संविधान पीठ ने एक महत्वपूर्ण टिप्पणी की है जो हमारे उद्देश्य के लिए बहुत प्रासंगिक है। संविधान पीठ ने कहा (पैरा 44 के माध्यम से)- "इस में कोई संदेह नहीं हो सकता है कि किसी आपराधिक मामले में अपील में बरी होना पूर्वव्यापी रूप से प्रभावी होता है और निचली अदालत द्वारा दी गई सज़ा को समाप्त कर देता है। इस का तात्पर्य यह है कि दोषसिद्धि और सज़ा की कठोरता और इस से जुड़े कलंक को पूरी तरह से मिटा दिया जाता है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि निचली अदालत द्वारा दोषसिद्धि

और सज़ा के तथ्य को तब तक मिटा दिया जाता है जब तक कि दोषसिद्धि और सज़ा को अपीलीय अदालत द्वारा दरकिनार नहीं कर दिया जाता। *दोषसिद्धि और सज़ा अपील में निर्णय के लंबित रहने तक बरकरार रहती है और लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 8 जैसे प्रावधानों के प्रयोजनों के लिए उस में प्रदान की गई अयोग्यताओं का निर्धारण करती है "* (ज़ोर दिया गया)। पैरा 40 में उल्लेखित अवलोकन का भी यही प्रभाव है।

इस लिए, हमारी राय है कि नामांकन या चुनाव की तारीख (जैसा भी मामला हो) के बाद की तारीख का अपीलीय निर्णय जिस का उम्मीदवार की दोषसिद्धि या उस पर पारित कारावास की सज़ा पर असर हो, उस से पिछली तारीख से अयोग्यता समाप्त होने का प्रभाव नहीं पड़ेगा यदि कोई व्यक्ति किसी अपराध के लिए दोषी ठहराए जाने के परिणामस्वरूप और कम से कम दो साल के कारावास की सजा पाए जाने पर वास्तव में और एक तथ्य के रूप में नामांकन दाखिल करने और नामांकन या चुनाव की तारीख (जैसा भी मामला हो) पर चुनाव लड़ने के लिए अयोग्य था।

प्रश्न संख्या (2)

"दो वर्ष से अन्यून के कारावास से दंडादिष्ट किया गया है" अभिव्यक्ति का क्या अर्थ है जैसा कि धारा 8 (3) आर. पी. ए. में उल्लेखित है? मुकदमे में एक व्यक्ति पर कई अपराधों का आरोप लगाया जा सकता है और उसे दोषी ठहराया जा सकता है। उसे इस तरह के विभिन्न मामलों के लिए कारावास की अलग-अलग शर्तों की सज़ा हो सकती है। एकल तौर पर प्रत्येक अपराध के लिए कारावास की अवधि 2 वर्ष से कम हो सकती है, लेकिन सामूहिक रूप से या एक साथ ले कर या एक दूसरे में जोड़ कर कारावास की कुल अवधि 2 वर्ष से अधिक हो सकती है। क्या ऐसी स्थिति में उपरोक्त धारा 8 (3) आकर्षित होगी।

इसके लिए एक जवाब पता करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 31 प्रासंगिक है। यह निम्नानुसार हैः

"31. एक ही विचारण में कई अपराधों के दोषसिद्ध होने के मामलों में दंडादेश-

(1) जब एक विचारण में कोई व्यक्ति दो या अधिक अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया जाता है तब, भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 71 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, न्यायालय उसे उन अपराधों के लिए विहित विभिन्न दंडों में से उन दंडों के लिए, जिन्हें देने के लिए ऐसा न्यायालय सक्षम है, दंडादेश दे सकता है; जब ऐसे दंड कारावास के रूप में हों तब, यदि न्यायालय ने यह निदेश न दिया हो कि ऐसे दंड साथ-साथ भोगे जाएंगे, तो वे ऐसे क्रम से एक के बाद एक प्रारंभ होंगे जिसका न्यायालय निदेश दे।

(2) दंडादेशों के क्रमवर्ती होने की दशा में केवल इस कारण से कि कई अपराधों के लिए संकलित दंड उस दंड से अधिक है जो वह न्यायालय एक अपराध के लिए दोषसिद्धि पर देने के लिए सक्षम है, न्यायालय के लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि अपराधी को उच्चतर न्यायालय के समक्ष विचारण के लिए भेजे:

परंतु-

(क) किसी भी दशा में ऐसा व्यक्ति चौदह वर्ष से अधिक की अवधि के कारावास के लिए दंडादिष्ट नहीं किया जाएगा।

(ख) संकलित दंड उस दंड की मात्रा के दुगने से अधिक न होगा जिसे एक अपराध के लिए देने के लिए वह न्यायालय सक्षम है।

(3) किसी सिद्धदोष व्यक्ति द्वारा अपील के प्रयोजन के लिए उन क्रमवर्ती दंडादेशों क योग, जो इस धारा के अधीन उसके विरुद्ध दिए गए हैं, एक दंडादेश समझा जाएगा।"

आपराधिक अदालत कई अपराधों के लिए कई दंड पारित करने में सक्षम है जिन में आरोपी को दोषी ठहराया गया है। कारावास की जिन कई अवधियों के लिए अभियुक्त को सज़ा सुनाई गई है, वे एक के बाद एक और ऐसे क्रम में शुरू होती हैं जैसा अदालत निर्देश दे, बशर्ते

अदालत यह निर्देश न दे कि सज़ाएं एक साथ चलेंगी। कारावास की प्रत्येक अवधि जिस के लिए अभियुक्त को कई अपराधों के लिए सज़ा सुनाई गई है, अदालत की शक्ति के भीतर होनी चाहिए और कारावास की अवधि को अवैध या अदालत की शक्ति से परे केवल इसलिए नहीं माना जाता है क्यों कि लगातार सज़ा के मामले में कारावास की कुल अवधि अदालत की क्षमता के भीतर सज़ा से अधिक है। एक दोषी व्यक्ति द्वारा अपील के उद्देश्य के लिए यह उसके खिलाफ पारित लगातार सज़ाओं का योग है जिसे एकल सज़ा माना जाएगा। इसी सिद्धांत को सही माना जा सकता है और अयोग्यता निर्धारित करने के लिए लागू किया जा सकता है। आर. पी. ए. की धारा 8 की उप-धारा (3) के तहत अयोग्यता की अवधि ऐसी दोषसिद्धि की तारीख से शुरू होती है। अयोग्यता कारावास से उनकी रिहाई की तारीख से गणना की गई छह साल की और अवधि के लिए जारी रहती है। अतः अयोग्यता दोषसिद्धि की तारीख से शुरू होती है चाहे व्यक्ति को कारावास की सज़ा भुगतने के लिए हिरासत में लिया गया हो या नहीं। वह अयोग्यता के प्रभाव से केवल इसलिए नहीं बच सकता क्योंकि उसे हिरासत में नहीं लिया गया है क्योंकि वह ज़मानत पर था या फरार था। एक बार हिरासत में लिए जाने के बाद वह कारावास की अवधि के दौरान अयोग्य रहेगा। उस की रिहाई की तारीख से छह साल की अवधि के लिए निरंतर अयोग्यता की अवधि शुरू होगी। आर. पी. ए. की धारा 8 की उप-धारा (3) को पढ़ने से यह स्पष्ट है कि कारावास की वास्तविक अवधि प्रासंगिक है। लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 के प्रावधानों को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के प्रावधानों के अनुरूप और इस तरह समझना होगा कि दोनों विधानों में निहित प्रावधानों को प्रभावी बनाया जा सके। कई अपराधों के लिए लगातार चलने वाली सज़ाओं के मामले में सज़ा के रूप में दी गई कारावास की कुल अवधि और साथ-साथ चलने वाली कारावास की कई अवधियों के दंड के मामले में कारावास की कई अवधियों में से सब से लंबी अवधि को यह तय करने के उद्देश्य से विचार में रखा जाना प्रासंगिक होगा कि कारावास की सज़ा 2 साल से कम के लिए है या नहीं।

सी. ए. संख्या 8213/2001 में प्रत्यर्थी के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री के. के. वेणुगोपाल द्वारा प्रस्तुत किया गया था कि आर. पी. ए. की धारा 8 (3) में वाक्यांश "कोई भी अपराध" की व्याख्या एकल अपराध के रूप में की जानी चाहिए जब तक कि कई अपराधों में से किसी एक के लिए कारावास की अवधि, जिस के लिए आरोपी को दोषी ठहराया गया है और सज़ा सुनाई गई है, 2 साल या उससे अधिक नहीं है, तब तक धारा 8 (3) के तहत अधिनियमित अयोग्यता आकर्षित नहीं होगी। हम प्रभावित नहीं हैं।

[1987] 2 एस. सी. सी. 707 में प्रेषित *श्री बालगणेशन मेटल्स बनाम एम. एन. षण्मुघम चेट्टी एवं अन्य* में शब्द "कोई भी" इस न्यायालय के विचार के लिए आया। यह माना गया कि "कोई भी" शब्द प्रतिमा के संदर्भ और विषय वस्तु के आधार पर "सभी" या "प्रत्येक" के साथ-साथ "कुछ" या "एक" को दर्शाता है। ब्लैक लॉ डिक्शनरी को अनुमोदन के साथ उद्धृत किया गया था।

ब्लैक लॉ डिक्शनरी (छठा संस्करण) में 'कोई भी' शब्द को (पृष्ठ सं 94) में निम्नानुसार परिभाषित किया गया है:

> **"कोई भी.** कुछ; कई में से एक; एक अनिश्चित संख्या। एक बेशर्त रूप से किसी भी प्रकार या मात्रा का।
>
> एक या कुछ (अनिश्चित काल के लिए)
>
> "कोई भी" का मतलब ज़रूरी नहीं कि केवल एक व्यक्ति हो, हो सकता है एक से अधिक या कई के संदर्भ में हो।
>
> शब्द "कोई भी" के अर्थ में विविधता है और इसका उपयोग "सभी" या "प्रत्येक" के साथ-साथ "कुछ" या "एक" को संकेतित करने के लिए किया जा सकता है और

इस का अर्थ किसी दिए गए क़ानून में क़ानून के संदर्भ और विषय वस्तु पर निर्भर करता है।

यह अक्सर "या तो", "हर", या "सभी" का पर्यायवाची होता है। इसकी व्यापकता संदर्भ द्वारा प्रतिबंधित हो सकती है; इस प्रकार, "किसी भी समय" कुछ कार्य करने का अधिकार देना आमतौर पर एक उचित समय के भीतर के अर्थ के रूप में समझा जाता है; और विशेष वर्गों की गणना के बाद "कोई अन्य" शब्दों को "अन्य जैसे" के रूप में पढ़ा जाना चाहिए, और केवल समान प्रकार या चरित्र के अन्य अर्थों को शामिल किया जाना चाहिए।"

शब्द 'कोई भी' का संदर्भ और परिस्थितियाँ के अनुसार कई अर्थों में से एक अर्थ हो सकता है। इस का अर्थ हो सकता है 'सभी'; 'प्रत्येक'; 'प्रत्येक'; 'कुछ'; या 'कई में से एक या कई'। 'कोई भी' शब्द का उपयोग 'कुछ', 'कई में से', 'एक अनंत संख्या' जैसी मात्रा को इंगित करने के लिए किया जा सकता है। इसका उपयोग उस संज्ञा की गुणवत्ता या प्रकृति को इंगित करने के लिए भी किया जा सकता है जिसे यह 'सभी' या 'प्रत्येक' जैसे विशेषण के रूप में योग्य बनाता है। (लॉ लेक्सिकन, पी. रामनाथ अय्यर, दूसरा संस्करण, पृ. 116). न्यायमूर्ति जी. पी. सिंह द्वारा सांविधिक व्याख्या के सिद्धांत (9 वां संस्करण, 2004) में कहा गया है (पृ. 302 पर) "जब किसी शब्द को अधिनियम में स्वयं परिभाषित नहीं किया गया है तो में सामान्य अर्थ का पता लगाने के लिए शब्दकोशों की सहायता लेने की अनुमति है जिस से यह पता लगाया जा सके कि उस शब्द को आम बोलचाल में कैसे समझा जाता है। हालाँकि, किसी शब्द के विभिन्न अर्थों में से किसी एक का चयन करते समय, हमेशा संदर्भ को ध्यान में रखा जाना चाहिए क्योंकि यह एक मौलिक नियम है कि "किसी अधिनियम में उपयोग किए गए शब्दों और अभिव्यक्तियों के अर्थ को उस संदर्भ से अपना रंग लेना चाहिए जिसमें वे दिखाई देते हैं"। इसलिए, "जब संदर्भ किसी शब्द का अर्थ काफी स्पष्ट कर देता है, तो कोशकारों के अनुसार,

एक शब्द के विविध अर्थों में से एक विशेष अर्थ को खोजना और चुनना अनावश्यक हो जाता है।”

आर. पी. ए. की धारा 8 (3) में, 'कोई भी' शब्द का उपयोग एक विशेषण के रूप में किया गया है जो 'अपराध' शब्द को अर्हता प्रदान करता है ताकि अपराध की संख्या नहीं बल्कि अपराध की प्रकृति का सुझाव दिया जा सके। उप-धारा (3) को पढ़ने से पता चलता है कि उप-धारा (3) में शामिल अपराध की प्रकृति 'उप-धारा (3) (धारा 8) में निर्दिष्ट किसी भी अपराध के अलावा कोई अन्य अपराध' है। संज्ञा 'अपराध' को अर्हता प्रदान करने वाले 'किसी भी' विशेषण का उपयोग इस दलील को स्वीकार करने के लिए नहीं किया जा सकता है कि कम से कम दो साल के लिए कारावास की सज़ा एक ही अपराध के संबंध में होनी चाहिए।

उप-धारा (3) अपने वर्तमान रूप में 1989 के अधिनियम संख्या 1 द्वारा पेश की गई थी और 15.3.1989 से लागू हुई थी। इसी अधिनियम ने उप-धारा (4) में भी कुछ परिवर्तन किए। 1988 के बिल संख्या 128 के साथ संलग्न उद्देशिका एवं कारणों में कहा गया है, “जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 कुछ अपराधों के लिए दोषसिद्धि के आधार पर अयोग्यता से संबंधित है। इस धारा में और अधिक अपराधों को शामिल करने का प्रस्ताव है ताकि आपराधिक इतिहास रखने वाले व्यक्तियों को सार्वजनिक जीवन में प्रवेश करने से रोका जा सके।” (भारत का राजपत्र असाधारण, भाग II, धारा 2, पृ. 105, 114 देखें)। संसद का उद्देश्य व्यापक है; यह सार्वजनिक जीवन में शुद्धता और ईमानदारी के हित में धारा 8 के क्षेत्र को व्यापक बनाने का है।

आर. पी. ए. की धारा 8 (3) के तहत अयोग्यता को लागू करने का उद्देश्य राजनीति के अपराधीकरण को रोकना है। कानून तोड़ने वालों को कानून नहीं बनाना चाहिए। आम तौर पर, कुछ अपराधों के लिए दोषी ठहराए जाने पर अयोग्यता को लागू करने का उद्देश्य आपराधिक पृष्ठभूमि वाले व्यक्तियों को राजनीति और सदन- शासन की एक शक्तिशाली शाखा, में प्रवेश

करने से रोकना है। आपराधिक पृष्ठभूमि वाले व्यक्ति चुनाव की प्रक्रिया को प्रदूषित करते हैं क्योंकि उनके पास चुनाव में सफलता हासिल करने के लिए आपराधिकता करने से कई प्रतिबंध नहीं हैं और उन्हें इस में लिप्त होने में कोई आपत्ति नहीं है। इस प्रकार, धारा 8 चुनावों में स्वतंत्रता और निष्पक्षता को बढ़ावा देने का प्रयास करती है, साथ ही चुनाव होने के दौरान कानून और व्यवस्था बनाए रखने का भी प्रयास करती है। प्रावधान को इतने सार्थक रूप से समझा जाना चाहिए कि इस के द्वारा लक्षित अनियमितता को प्रभावी ढंग से रोका जा सके। 'किसी भी अपराध के लिए दोषी व्यक्ति' अभिव्यक्ति का अर्थ 'वे सभी अपराध जिनके लिए एक व्यक्ति पर आरोप लगाया गया है और एक ही मुकदमे में दोषी ठहराया गया है' के रूप में लगाया जाना चाहिए। "कम से कम 2 साल के लिए कारावास की सजा" अभिव्यक्ति की प्रयोज्यता का निर्णय कारावास की कुल अवधि की गणना करके किया जाएगा जिसके लिए व्यक्ति को सज़ा सुनाई गई है।

श्री के. के. वेणुगोपाल, एक अपील में प्रत्यर्थी की ओर से पेश वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया कि आर. पी. ए. की धारा 8 एक दंडात्मक प्रावधान है और इसलिए इसका सख्ती से अर्थ लगाया जाना चाहिए। हमें इस प्रस्तुति को स्वीकार करना मुश्किल लगता है। चुनाव लड़ना एक वैधानिक अधिकार है और पद धारण करने के लिए योग्यता और अयोग्यता को वैधानिक रूप से निर्धारित किया जा सकता है। अयोग्यता के किसी प्रावधान को दंडात्मक प्रावधान नहीं कहा जा सकता है और निश्चित रूप से इसे आपराधिक कानून में निहित दंडात्मक प्रावधान के साथ नहीं जोड़ा जा सकता है। यदि प्रस्ताव के लिए किसी आधार की आवश्यकता है तो [2003] 6 एस.सी.सी. 107 में प्रेषित *ललिता जालान एवं अन्य बनाम बॉम्बे गैस कंपनी लिमिटेड एवं अन्य* में निर्णित किया गया है कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 630 एक दंडात्मक प्रावधान नहीं है। न्यायालय ने आगे कहा है, "यह सिद्धांत कि किसी अपराध को लागू करने या जुर्माना लगाने वाले कानून का सख्ती से अर्थ लगाया जाना चाहिए, सार्वभौमिक अनुप्रयोग का नहीं है जिसका कि हर मामले में पालन किया जाना चाहिए।"

पी. जयराजन के मामले में कारावास की सज़ा निचली अदालत के फैसले के अनुसार क्रम्वर्ती रूप से चलनी थी। विभिन्न अपराधों के लिए कारावास की सज़ाओं की अवधियों का योग करना होगा। कुल मिलाकर, पी. जयराजन जिस कुल अवधि के लिए जेल में रहे होंगे, वह 2 साल की अवधि से अधिक थी और इसके परिणामस्वरूप उन पर आर. पी. ए. की धारा 8 (3) लागू होती है और वह नामांकन पत्रों की जांच की तारीख पर अयोग्य थे। उनका नामांकन निर्वाचन अधिकारी द्वारा स्वीकार नहीं किया जा सकता था और उन्हें अयोग्य नहीं ठहराना सही नहीं था। उपरोक्त प्रश्न-1 पर हमारे द्वारा लिए गए कानून के दृष्टिकोण के आलोक में, कारावास की कई शर्तों की बाद की घटना, जिसे अपीलीय न्यायालय द्वारा जांच की तारीख के बाद की तारीख को समवर्ती रूप से चलाने का निर्देश दिया गया है, अप्रासंगिक है और इसे दरकिनार किया जा सकता है।

प्रश्न संख्या (3)

आर. पी. ए. की धारा 8 की उप-धारा (3) और (4) के तुलनात्मक अध्ययन से पता चलता है कि संसद ने अयोग्यता लागू करने के उद्देश्य से चुनाव में उम्मीदवारों को दो वर्गों में वर्गीकृत करने का विकल्प चुना है। ये दो वर्ग ये हैंः (i) एक व्यक्ति जो दोषसिद्धि की तारीख को संसद का सदस्य है या किसी राज्य के विधानमंडल का सदस्य है, और (ii) कोई व्यक्ति जो ऐसा सदस्य नहीं है। दो समूहों में आने वाले व्यक्ति अच्छी तरह से परिभाषित और निर्धारित समूह हैं और इस लिए, दो निश्चित वर्ग बनाते हैं। इस तरह के वर्गीकरण को अनुचित नहीं कहा जा सकता है क्योंकि यह एक अच्छी तरह से निर्धारित अंतर पर आधारित है और इसे प्राप्त करने के लिए एक सार्वजनिक उद्देश्य के साथ संबंध है।

एक बार चुनाव हो जाने और एक सदन अस्तित्व में आने के बाद, ऐसा हो सकता है कि सदन के किसी सदस्य को दोषी ठहराया जाए और सज़ा सुनाई जाए। ऐसी स्थिति से अलग तरीके से निपटने की ज़रूरत है। यहां ज़ोर केवल किसी व्यक्ति के चुनाव लड़ने या सदन

के सदस्य के रूप में बने रहने के अधिकार पर नहीं है, बल्कि लोकतांत्रिक रूप से गठित सदन के अस्तित्व और निरंतरता पर भी है। यदि सदन के किसी सदस्य के दोषसिद्धि की घोषणा और उसे सज़ा सुनाते ही, जिस से उसकी सदस्यता ज़ब्त हो जाती है, को सदन में बैठने और कार्यवाही में भाग लेने से रोक दिया जाता है, तो इसके दो परिणाम होंगे। पहला, सदन की सदस्यता की ताकत कम हो जाएगी, उसी तरह उस राजनीतिक दल की ताकत भी कम हो जाएगी जिस से दोषी सदस्य संबंधित है। सत्ता में सरकार कम बहुमत पर रह सकती है जहां प्रत्येक सदस्य महत्वपूर्ण रूप से गिना जाता है और एक भी सदस्य की अयोग्यता का सरकार के कामकाज पर हानिकारक प्रभाव पड़ सकता है। दूसरा, उप-चुनाव कराना होगा जो व्यर्थ साबित हो सकता है, जिसके परिणामस्वरूप दोषी सदस्य को एक वरिष्ठ आपराधिक न्यायालय द्वारा बरी किए की स्थिति में जटिलताएं भी हो सकती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इन कारणों ने संसद को सदन के वर्तमान सदस्यों को एक अलग श्रेणी में वर्गीकृत करने के लिए राज़ी किया है। इसलिए, धारा 8 की उप-धारा (4) में प्रावधान है कि यदि अयोग्यता की तारीख को कोई व्यक्ति किसी सदन का सदस्य है, तो वह अयोग्यता के आकर्षित होने की तारीख से 3 महीने की अवधि के लिए प्रभावी नहीं होगी। दोषी सदस्य को अपील या संशोधन दायर करने में सक्षम बनाने के उद्देश्य से 3 महीने की अवधि प्रदान की गई है। यदि दोषसिद्धि और/या सज़ा को जारी करते हुए कोई अपील या संशोधन दायर किया गया है जो अयोग्यता का आधार है, तो अयोग्यता तब तक स्थगित रहेगी जब तक ऐसी अपील या आवेदन का अदालत द्वारा अपील या संशोधन में निपटारा नहीं किया जाता।

[2001] 7 एस. सी. सी. 425 में प्रेषित *शिबू सोरेन बनाम दयानंद सहाय एवं अन्य* मामले में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ के सामने लाभ का पद धारण करने के कारण व्यक्ति की अयोग्यता की जांच करने का प्रश्न था। न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि इस तरह के प्रावधान की व्याख्या प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यथार्थवादी तरीके से की जानी चाहिए। जबकि "एक सख्त और संकीर्ण संरचना" को

अपनाया नहीं जाए जिस का प्रभाव "कई प्रमुख और अन्य योग्य व्यक्तियों को चुनाव लड़ने के लिए बंद करने" का हो सकता है, लेकिन साथ ही "एक ऐसे वैधानिक प्रावधान का केवल व्यापक और सामान्य दृष्टिकोण लेना और आवश्यक बिंदुओं को नज़रअंदाज़ करना अनुचित नहीं होगा जो एक व्यक्ति पर अयोग्यता लागू करता है।" चुनाव लड़ने का अधिकार और पद धारण करना दांव पर है। इसलिए, "परीक्षणों की पांडित्यपूर्ण टोकरी नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक दृष्टिकोण" को उचित निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए अदालतों का मार्गदर्शन करना चाहिए। अयोग्यता के प्रावधान का प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य के साथ एक पर्याप्त और उचित संबंध होना चाहिए और प्रावधान की व्याख्या अधिनियम के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए वास्तविकता के संदर्भ में की जानी चाहिए।

आर. पी. ए. की धारा 8 की उप-धारा (4) इस कि उप-धाराओं (1), (2) एवं (3) से उत्कीर्ण एक अपवाद के रूप में कार्य करती है। स्पष्ट रूप से उप-धारा (1), (2) और (3) के प्रभाव से बचने का आधार सदन की सदस्यता है। इस तरह के एक अपवाद को बनाने का उद्देश्य किसी व्यक्ति को लाभ प्रदान करना नहीं है बल्कि इसका उद्देश्य सदन की रक्षा करना है। इसलिए, जैसे ही सदन भंग हो जाता है या व्यक्ति उस सदन का सदस्य नहीं रह जाता है, वैसे ही उप धारा (4) लागू होना बंद हो जाती है। उप-धारा (4) की कोई अन्य व्याख्या इसे असंवैधानिक होने की वजह से निरस्त होने के लिए उत्तरदायी बना देगी। एक बार जब सदन भंग हो जाता है और व्यक्ति सदस्य नहीं रह जाता है, तो नामांकन दाखिल करने की तारीख पर उसके और किसी अन्य उम्मीदवार के बीच कोई अंतर नहीं होता है जो सदस्य नहीं था। ऐसे दो व्यक्तियों के साथ अलग तरह से व्यवहार करना मनमाना और भेदभावपूर्ण होगा और अनुच्छेद 14 के प्रकोप के अधीन होगा। हमारे द्वारा इस प्रकार लिए गए दृष्टिकोण से हटने के परिणामस्वरूप भी विसंगत परिणाम होंगे जो संसद की मंशा से नहीं थे।

निष्कर्ष

संक्षेप में, इन अपीलों में निर्णय के लिए उत्पन्न होने वाले प्रश्नों पर हमारे निष्कर्ष इस प्रकार हैंः.

1. लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (संक्षेप में आर. पी. ए.) की धारा 100 (1) (ए) के अर्थ के भीतर निर्वाचित उम्मीदवार की योग्यता या अयोग्यता का सवाल को उसके चुनाव की तारीख के संदर्भ में निर्धारित किया जाना है, जो तारीख, अधिनियम की धारा 67 ए में परिभाषित है, वह तारीख होगी जिस पर निर्वाचन अधिकारी द्वारा उम्मीदवार को निर्वाचित घोषित किया गया था। क्या नामांकन अनुचित रूप से स्वीकार किया गया था, इस का निर्धारण धारा 100 (1) (डी) (i) के उद्देश्य के लिए नामांकन की जांच के लिए निर्धारित तिथि, अधिनियम की धारा 36 (2) (ए) में होने वाली अभिव्यक्ति के संदर्भ में किया जाना चाहिए। इस तरह की तिथियां यह निर्धारित करने के उद्देश्य से केंद्र बिंदु हैं कि क्या उम्मीदवार योग्य नहीं है या सदन में सीट को भरने के लिए चुने जाने के लिए अयोग्य है। ऐसी केंद्र बिंदु तिथियों के संदर्भ में ही धारा 8 की उप-धाराओं (1), (2) और (3) के तहत अयोग्यता का प्रश्न निर्धारित करना होगा। दोषसिद्धि के खिलाफ अपील के लंबित होने का तथ्य अप्रासंगिक और महत्त्वहीन है। इसलिए अपील या पुनरीक्षण में दोषसिद्धि या सज़ा को दरकिनार करने या सज़ा में कमी करने के बाद के निर्णय का उस अयोग्यता को समाप्त करने का प्रभाव नहीं होगा जो ऊपर उल्लिखित केंद्र बिंदु तिथियों पर मौजूद थी। निर्णायक तिथियाँ चुनाव की तारीख और नामांकन की जांच की तारीख होती हैं न कि चुनाव याचिका या उसके खिलाफ अपील में निर्णय की तारीख।

2. आर. पी. ए. की धारा 8 (3) में होने वाली अभिव्यक्ति "किसी भी अपराध के लिए दोषी ठहराए गए व्यक्ति और कम से कम दो साल के लिए कारावास की सज़ा" के भीतर अयोग्यता की प्रयोज्यता को आकर्षित करने के उद्देश्य से जो देखा जाना है, वह कुल समय है जिसके लिए किसी व्यक्ति को मुकदमे में सुनाई गई दोषसिद्धि और

सज़ा के परिणामस्वरूप कारावास में रहने का आदेश दिया गया है। 'अपराध' शब्द के बाद आने वाले 'कोई भी' शब्द को अपराध की प्रकृति के रूप में समझा जाना चाहिए न कि अपराध/अपराधों की संख्या के रूप में।

3. आर. पी. ए. की धारा 8 की उप-धारा (4) उप-धारा (1), (2) और (3) का एक अपवाद है। अयोग्यता से बचने की पूर्व शर्त उस व्यक्ति के सदन का सदस्य होते हुए दोषी ठहराए जाने की है। इस तरह की बचाव का लाभ केवल तब तक उपलब्ध है जब तक सदन का अस्तित्व बना रहता है और व्यक्ति सदन का सदस्य बना रहता है। यदि सदन भंग हो जाता है या व्यक्ति सदन का सदस्य नहीं रह जाता है तो यह बचाव लागू नहीं होता है।

परिणाम

पूर्वगामी कारणों से, सिविल अपील सं. 8213 वर्ष 2001, के. प्रभाकरण बनाम पी. जयराजन को स्वीकृत किया जाता है। 5.10.2001 दिनांकित उच्च न्यायालय के फैसले को दरकिनार किया जाता है। अपीलार्थी द्वारा दायर चुनाव याचिका को स्वीकृत किया जाता है। प्रत्यर्थी पी. जयराजन का केरल राज्य विधानसभा के लिए कुथुपरम्बा विधानसभा क्षेत्र से चुनाव, जिसे 13.5.2001 को घोषित किया था, को दरकिनार किया जाता है। प्रत्यर्थी संख्या 1 अपीलार्थी का पूरा खर्च वहन करेगा।

सिविल अपील सं. 6691 वर्ष 2002 को भी स्वीकृत किया जाता है। 5.7.2002 दिनांकित उच्च न्यायालय के फैसले को दरकिनार किया जाता है। अपीलार्थी द्वारा दायर चुनाव याचिका स्वीकृत की जाती है। प्रतिवादी नफ़े सिंह का 37-बहादुरगढ़ विधानसभा क्षेत्र से चुनाव को अमान्य घोषित किया जाता है क्योंकि वे लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 (3) के तहत उम्मीदवार होने के लिए अयोग्य थे। प्रत्यर्थी संख्या 1 अपीलार्थी का पूरा खर्च वहन करेगा।

के. जी. बालाकृष्णन, जे. मुझे कुलीन और विद्वान भाई, लाहोटी, मुख्य न्यायाधीश द्वारा तैयार किए गए मसौदे में निर्णय को पढ़ने का लाभ मिला और मुझे खेद है कि मैं लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 (3) पर दी गई व्याख्या से सहमत नहीं हो पा रहा हूं। अन्य सभी बिंदुओं पर, मैं सम्मानपूर्वक निर्णय से सहमत हूं।

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 (3) के तहत किसी भी अपराध के लिए दोषी ठहराए गए और कम से कम दो साल के कारावास की सज़ा पाए व्यक्ति (उप-धारा (1) या उप-धारा (2) में निर्दिष्ट किसी भी अपराध के अलावा) को इस तरह के दोषसिद्धि की तारीख से अयोग्य ठहराया जाएगा और उस की रिहाई के बाद से छह साल की और अवधि के लिए अयोग्य ठहराया जाता रहेगा। यदि नामांकन पत्रों की जांच के समय व्यक्ति अयोग्य पाया जाता है, तो उसका नामांकन पत्र अस्वीकार कर दिया जाएगा और वह चुनाव लड़ने में असमर्थ होगा। लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 100 के तहत, नामांकन की कोई भी अनुचित स्वीकृति चुनाव को अमान्य घोषित करने के लिए एक वैध आधार है, यदि चुनाव का परिणाम, जहां तक निर्वाचित उम्मीदवार का संबंध है, भौतिक रूप से प्रभावित हुआ है।

विचार के लिए प्रश्न यह है कि क्या ऐसे मामले में जहां अभियुक्त को विभिन्न मामलों में दोषी ठहराया गया है और कारावास की सज़ा की कुल अवधि दो साल या उस से अधिक है और मजिस्ट्रेट लगातार चलने के लिए विभिन्न अवधियों के लिए कारावास की सज़ा का आदेश देता है, और यदि ऐसे कारावास की कुल अवधि जिस में दोषी व्यक्ति को दो साल या उससे अधिक से गुज़रना होगा, तो क्या उसे लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 8 (3) के तहत अयोग्य ठहराया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, भले ही उन अपराधों में से किसी एक अपराध के लिए कारावास की सज़ा दो साल या उस से अधिक नहीं है जिस के लिए वह दोषी ठहराया गया है, फिर भी क्या उसे इस आधार पर लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 (3) के तहत

अयोग्य ठहराया जा सकता है कि दण्डाधिकारी/न्यायाधीश का आदेश विभिन्न मामलों पर सज़ा लगातार चलने का है।

सिविल अपील सं. 8213 में वर्ष 2001 में अपीलार्थी के लिए विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि यह विभिन्न मामलों में सज़ा की कुल अवधि है जो महत्वपूर्ण है और तत्काल मामले में, प्रतिवादी को छह मामलों में अपराधों का दोषी पाया गया था। आई. पी. सी. की धारा 143 के साथ धारा 149 के तहत अपराध के लिए उन्हें एक वर्ष की अवधि के लिए कठोर कारावास से गुज़रने की सज़ा सुनाई गई जब कि लोक संपत्ति नुकसान निवारण अधिनियम की धारा 3(2)(ई) के तहत अपराध के लिए एक वर्ष की अवधि के लिए कठोर कारावास से गुज़रने की सज़ा सुनाई गई और विभिन्न अन्य अपराधों के लिए उन्हें एक महीने से लेकर छह महीने तक की अवधियों के लिए कारावास की सज़ा सुनाई गई थी और जैसा कि न्यायिक दंडाधिकारी प्रथम श्रेणी ने निर्देश दिया था कि विभिन्न मामलों में सज़ाएं लगातार चलेंगी। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया है कि प्रतिवादी को दोषी ठहराया गया है और दो साल से अधिक की अवधि के लिए कारावास की सजा गई है और इसलिए वह लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 (3) के तहत अयोग्य हैं। विचार के लिए प्रश्न यह है कि क्या सिविल अपील संख्या 8213 वर्ष 2001 में प्रत्यर्थी को किसी अपराध के लिए दोषी ठहराया गया था और कम से कम दो साल के कारावास की सज़ा सुनाई गई थी। मैं अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए इस तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ हूं कि लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 (3) में उपयोग किए गए "किसी भी" शब्द का अर्थ इस तरह से लगाया जाना चाहिए कि इसका अर्थ "एक से अधिक" या "सभी" या बहुलता के अर्थ में हो। लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 8 (3) में उपयोग किए गए "दो साल से कम नहीं" शब्दों का अर्थ लगाना भी मुश्किल है, जिस में कारावास की कुल अवधि पर ज़ोर दिया गया है जो एक दोषी को विभिन्न अपराधों के लिए कारावास की सभी अवधियों से एक साथ गुज़रना पड़ सकता जब इसे लगातार चलाने का आदेश दिया गया है।

धारा 8 (3) के पहले भाग में उपयोग किए गए शब्दों, अर्थात "एक व्यक्ति किसी भी अपराध के लिए दोषी" से यह स्पष्ट है कि अयोग्य होने के लिए व्यक्ति को किसी भी अपराध के लिए दोषी ठहराया जाना चाहिए और कम से कम दो साल के लिए कारावास की सज़ा सुनाई जानी चाहिए। छह मामलों के अपराधों में से, जिन के लिए प्रत्यर्थी को दोषी पाया गया था, यदि उन सभी को एकल रूप में लिया जाता है, तो प्रत्यर्थी किसी भी ऐसे अपराध के लिए दोषी व्यक्ति नहीं है, जिस के लिए उसे दो साल से अधिक की सज़ा दी गई है।

प्रतिवादी के मामले में, दंडाधिकारी ने आदेश दिया कि सज़ा विभिन्न मामलों में लगातार चलेगी। इस का मतलब यह नहीं है कि प्रतयर्थी को किसी ऐसे अपराध के लिए दोषी ठहराया गया था जिस के लिए कारावास की सज़ा दो साल या उस से अधिक है। सज़ा के समवर्ती या लगातार चलने का निर्देश एक निर्देश है जिस के अनुसार सज़ा को निष्पादित किया जाना है। यह सज़ा की प्रकृति को प्रभावित नहीं करता है। यह भी ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि दंड प्रक्रिया संहिता में, यह सुझाव देने के लिए कोई दिशानिर्देश या विशिष्ट प्रावधान नहीं हैं कि किस परिस्थिति में कारावास की विभिन्न सज़ाओं को समवर्ती या लगातार चलाने का निर्देश दिया जाएगा। जहाँ तक मेरी जानकारी है, उच्च स्तरों के न्यायालयों द्वारा कोई न्यायिक निर्णय नहीं लिए गए हैं जो दिशा-निर्देश निर्धारित करते हैं कि विभिन्न मामलों में दोषी के कारावास की सज़ा को समवर्ती रूप से या लगातार चलाने का निर्देश देने के लिए क्या मानदंड होने चाहिए। कुछ मामलों में, यदि दोषी व्यक्ति एक आदतन अपराधी है और उसे विभिन्न मामलों में अपराधों का दोषी पाया गया है और यह संदेह है कि अगर उसे समाज पर छोड़ दिया जाता है तो वह एक खतरा होगा, तो अदालत निर्देश देगी कि ऐसे व्यक्ति को लगातार कारावास से गुज़रना होगा। केवल इसलिए कि दंडाधिकारी ने आदेश दिया कि सज़ा लगातार चलेगी और सज़ा की कुल अवधि दो साल या उससे अधिक है, एक व्यक्ति को दोषी ठहराए जाने पर लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 (3) के तहत अयोग्यता आकर्षित नहीं होगी। यदि ऐसा है, तो दंडाधिकारी विभिन्न अपराधों के एक मामले में सज़ा को एक साथ चलाने का

आदेश दे सकता है, और यदि कोई अन्य दंडाधिकारी समान प्रकार के विभिन्न अपराधों के किसी और मामले में सज़ा को लगातार चलाने का निर्देश देता है, तो बाद के मामले में व्यक्ति को अयोग्यता होगी, जब कि पूर्व को जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 (3) के तहत ऐसी कोई अयोग्यता नहीं होगी। लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 (3) के तहत अयोग्यता पूरी तरह से उस निर्देश पर निर्भर नहीं होगी जिस के अनुसार सज़ा को निष्पादित किया जाना है, विशेष रूप से जब इस संबंध में कोई वैधानिक या न्यायिक दिशानिर्देश नहीं हैं।

इसके अलावा, यदि अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के तर्क को स्वीकार किया जाए, तो लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 (3) में उपयोग किए गए शब्द अपर्याप्त हैं और विधानमंडल ने यह कहते हुए अपना इरादा व्यक्त किया होगा कि विभिन्न मामलों में सज़ा की कुल अवधि को इस बात पर विचार करने के लिए ध्यान में रखा जाएगा कि क्या कारावास दो वर्षों या उस से अधिक के लिए है।

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 (3) एक ऐसा प्रावधान है जिस के द्वारा एक व्यक्ति को चुनाव लड़ने के लिए अयोग्य घोषित किया जाता है। इन शब्दों की कड़ाई से व्याख्या की जानी चाहिए और यदि व्यक्ति खंड में उपयोग किए गए शब्दों के सामान्य अर्थ के चार कोनों के भीतर आता है, तभी उस के खिलाफ अयोग्यता का इस्तेमाल किया जा सकता है। यदि उसे किसी अपराध के लिए दो वर्षों से ज़्यादा की सज़ा के साथ दोषी नहीं ठहराया गया है, तो वह चुनाव लड़ने के लिए अयोग्य होने के लिए उत्तरदायी नहीं है। बेशक, राजनीति का अपराधीकरण एक गंभीर समस्या बन गई है जिस से निपटा जाना चाहिए और कोई भी इस बात पर विवाद नहीं करेगा कि यह हमारे लोकतांत्रिक संस्थानों की नींव को प्रभावित करता है, लेकिन यह अपने आप में शब्दों की व्यापक तरीके से व्याख्या करने के लिए पर्याप्त नहीं है जिस से उन व्यक्तियों को इसके दायरे में शामिल किया जा सके जो सख्ती से इसके

दायरे में नहीं आ रहे हैं, विशेष रूप से जब अयोग्यता केवल चुनाव लड़ने के लिए नहीं है और अयोग्यता रिहाई के बाद से छह साल की अवधि तक जारी रहेगी।

अपराध की गंभीरता मायने रखती है न कि विभिन्न लघु अपराधों में दोषसिद्धि और इन विभिन्न लघु अपराधों के लिए सभी सज़ाओं को एक साथ रखकर की गई दो वर्ष या उस से अधिक की कुल अवधि की सज़ा। लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 (3) में उपयोग किए गए "किसी भी अपराध" को "कई अपराधों में से" के रूप में लिया जाना है और सिविल अपील संख्या 8213 वर्ष 2001 में प्रत्यर्थी को किसी भी अपराध के लिए दोषी नहीं ठहराया गया है, जिस के लिए कारावास कम से कम दो वर्ष की अवधि के लिए है और वह अयोग्य नहीं था और, मेरी राय में, उच्च न्यायालय ने उन के पक्ष में प्रश्न का सही फैसला किया। अपीलार्थी द्वारा सिविल अपील संख्या 8213 वर्ष 2001 में दायर चुनाव याचिका को सही ढंग से खारिज कर दिया गया था। सिविल अपील संख्या 8213 वर्ष 2001 खारिज होने योग्य है।

आदेश

बहुमत की राय को देखते हुए, सिविल अपील सं 8213 वर्ष 2001, *के. प्रभाकरण बनाम पी. जयराजन* को स्वीकृत किया जाता है। उच्च न्यायालय का फैसला दिनांक 5.10.2001 को दरकिनार किया जाता है। अपीलार्थी द्वारा दायर चुनाव याचिका को स्वीकृत किया जाता है। सं. 14 कुथुपरम्बा विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र से प्रत्यर्थी पी. जयराजन का केरल राज्य विधानसभा का चुनाव जिसे 13.5.2001 को घोषित किया गया था, दरकिनार किया जाता है। प्रत्यर्थी संख्या 1 अपीलार्थी का पूरा खर्च वहन करेंगे।

सिविल अपील सं. 6691 वर्ष को भी स्वीकृत किया जाता है। उच्च न्यायालय का फैसला दिनांक 5.07.2002 को दरकिनार किया जाता है। अपीलार्थी द्वारा दायर चुनाव याचिका को स्वीकृत किया जाता है। 37-बहादुरगढ़ विधानसभा क्षेत्र से प्रत्यर्थी नफे सिंह के चुनाव को

अमान्य घोषित किया जाता है क्योंकि वे लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 (3) के तहत उम्मीदवार होने के लिए अयोग्य थे। प्रत्यर्थी संख्या 1 अपीलार्थी का पूरा खर्च वहन करेगा।

अपीलें स्वीकृत।